प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

पहली बार १९६२
मूल्य
दो रुपये

मुद्रक
नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स,
दिल्ली

प्रकाशकीय

लूई कून विश्वके उन प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञोंमेसे थे, जिन्होंने अनगिनत व्यक्तियोंको न केवल दवाओं और डाक्टरोंके चक्करसे बचाया, अपितु उन्हें स्वस्थ रहने तथा बीमार पड़नेपर अपनी चिकित्सा आप करनेकी प्रेरणा दी।

प्राकृतिक चिकित्साके सबंधमें उन्होंने कई पुस्तकें लिखी है, जिन्होंने बहुत-से पाठकोंको प्रभावित किया है। उन्होंने प्राकृतिक चिकित्साकी श्रेष्ठता, उपयोगिता तथा प्रामाणिकताको सिद्ध किया। उनकी चिकित्सा-पद्धति तथा उनकी पुस्तकोंके महत्वके सबंधमें कुछ महापुरुषोंकी राय सुन लीजिये

महात्मा गांधी

बहुत अधिक लोगोंपर प्रयोग करके डा० लूई कूने इस परिणाम-पर पहुचे कि सब तरहके रोगोंमें पानीके दो-तीन प्रकारके (कटि मेहन और भाप) स्नानोंसे लाभ पहुचता है।

वह सारी बीमारियोंकी जड़ मेदेको बतलाता है। मेदेमें ज्वर होने-पर शरीरके बाहरी भागोंपर फोड़े फुसी, सूजन तथा अन्य रोग प्रकट होते है। वही गरमी बाहर निकलकर सारे शरीरको गरम कर देती है। जल-चिकित्सापर डा० लूई कूनेसे पहलेके एक लेखककी 'जल चिकित्सा' नामक एक बहुत पुरानी पुस्तक है। पर लूई कूनके पहले किसीने रोगो की एकतापर इतना जोर नहीं दिया था और न यही बतलाया था कि सारी बीमारियोंकी जड़ मेदा (मेदेकी खराबी—अपच) है। हमें लूई कूने-के मतको सर्वांशमें सही मान लेनेकी जरूरत न होनेपर भी इतना निश्चित है कि उनके विचार और उपचार अनेकानेक रोगोंमें सही साबित हुए है। डरबनके स्व० मजिस्ट्रेट मि० ट्रीटन धनुर्वातके कारण अपाहिज हो गये थे। बहुत इलाजसे हार चुकनेपर वह लूई कूनेके यहाँ

(लिपजिग) जाकर चगे हुए। वहास लौटकर वह लोगोको हमेशा लूई कूनके उपचारोके प्रयोगकी सलाह दिया करते थ।

राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद

मने कई महीना तक लूई कूनकी जल चिकित्सा-पद्धतिसे कटि स्नान करके कुछ लाभ उठाया था। उनकी अग्रेजी पुस्तक भी पढी थी। उनसे मिलनकी इच्छाके कारण मन अपने यूरोपके यात्राक्रममें लिपजिग का रक्खा था। स्टशनस सीधे उनके चिकित्सालयमे गया। वहा सुना कि लूई कूनेकी मृत्यु हो चुकी ह। वह फल खानके बड पक्षपाती थे। अवस्था काफी होनपर भी पेड़पर फल तोडन चढ़ थ और गिरकर गहरी चोट खा गय और मर गय। उनके लडकेसे भेंट हुई। पर वह अग्रेजी नहीके बराबर जानते थ। किसी प्रकार बातें हुईं। उन्हान मेरे लिए स्नान तथा भोज नादिका एक नुस्खा लिख दिया। एक बार स्नान कराकर भी दिखा दिया।

प्राकृतिक चिकित्सा-सम्बन्धी अनेक नामी ग्रथों (नेचर क्योर, प्रैक्टिस आव नेचर क्योर, आदि) के लेखक तथा अमरीकाके सुविख्यात प्राकृतिक चिकित्सक डा लिडलहार, एम डी

प्राकृतिक चिकित्साके सिद्धातोंसे परिचित हानके लगभग छ महीन बाद ही म अपनी सारी सपत्ति बचकर और कारोबार समेटकर सकुटुब लूई कूनके चिकित्सालयमें जा पहुचा। वहा मरे स्वास्थ्यमें इतनी अधिक उन्नति हुई और मन ऐसी आश्चयजनक बातें प्राकृतिक चिकित्सा क सबधमें अनुभव की कि मेर दिमागमेंसे प्राकृतिक चिकित्साको छोडकर और सब बातें जाती रही।

बेनडिक्ट लुस्ट (एन डी डी, ओ डी सी., एम डी) अमरीका, सपादक, यूनिवर्सल नेचरोपथी इन्साइक्लोपीडिया (सन् १९१९)

लूई कूनकी 'नवीन चिकित्सा (न्यू साइस ऑव हीलिंग) सयुक्तिक, सप्रमाण (अटकल-पच्चू नहीं) चिकित्साके बुनियादी सिद्धातोंका प्रकट करनेवाली सर्वोत्तम पुस्तक मानी जायगी।

कूने ससारको निदानका सर्वोत्तम तक पूर्ण विचार देनेवाला और रोगो तथा उपचारकी एकता बतलानेवाला सर्वप्रथम मनुष्य था।

उसकी 'आकृतिसे रोगकी पहचान' (साइंस ऑव फशेल एक्सप्रशन) पुस्तक हमें रोगीकी दशाका और उसके शरीरमें मौजूद दोष-सचय का ज्ञान करानेवाली एकमात्र पुस्तक है। वह प्राकृतिक चिकित्साका सस्थापक और प्रथम शिक्षक था।

हिन्दी-साहित्यके महारथी, 'सरस्वती'-सपादक, स्व प महावीरप्रसाद द्विवेदी, 'जल-चिकित्सा' के सक्षिप्त सस्करणकी भूमिकामें

इस पुस्तकके लेखक उदाराशय परोपकार-मूर्ति महात्माका नाम लूई कूने है। इनकी बताई जल चिकित्सासे मानव-जातिको जो लाभ पहुच रहा है और जो पहुचगा उसकी सीमा स्थिर नही की जा सकती। मृत्यु-मुखके निकट पहुचते हुए मनुष्य भी इस चिकित्सासे अनत लाभ प्राप्त करते है। यह चकित्सा बहुत ही सीधी है।

वाइटलिटी, फास्टिग एण्ड न्यूट्रीशन तथा फिजीकल फिनामेना आव स्पिरिचुअलाइजेशन आदि सुप्रसिद्ध पुस्तकोंके लेखक तथा अमरीका साइटिफिक रिसच इन्स्टीटयूटके सदस्य हीयर वर्ड कॅरिंगटन

मने कनकी आकृति विज्ञानके अनुसार अनेक रोगियाका निदान किया और उसे सही पाया।

प्रस्तुत पुस्तक इन्ही महानुभावकी 'साइस ऑव फेशल एक्सप्रशन'-का हिन्दी-अनुवाद है। इस पुस्तकमें बताया गया है कि रोगियाके शरीरके विभिन्न अगोमें जो दोप सचित होता है उसे देखकर रोगका निदान सहज ही किया जा सकता है। अपनी इस बातको उन्होने बडे ही वैज्ञानिक ढगसे समझाया है और अनेक चित्राकी सहायतासे स्पष्ट किया है।

इस पुस्तकसे प्रत्येक व्यक्तिको अपने शरीरको और यदि उसमें कोई रोग है तो उसे समझनमें बडी मदद मिलती है। इस दृष्टिसे यह पुस्तक सबके कामकी है।

बडे हर्पकी बात है कि इसका अनुवाद उन सज्जनने किया है, जो स्वय बहुत ही कुशल प्राकृतिक चिकित्सक है। उनकी लेखन-शाली अनूठी है। इस पुस्तकको पढकर एसा लगता है, मानो वह मूल हिन्दीमें ही लिखी गई हो।

प्राकृतिक चिकित्सा-सबधी ये पुस्तकें श्री घमचद सरावगी द्वारा प्रदत्त राशि से प्रकाशित हो रही ह। यह राशि उन्हाने इसी निमित्त दी ह। इस मालामें अवतक निम्न पुस्तकें निकल चुकी हैं—

१ प्राकृतिक चिकित्सा—क्या व कसे ? २ नवीन चिकित्सा ३ सरल योगासन ४ प्राकृतिक जीवनकी ओर ५ प्राकृतिक चिकित्सा के चमत्कार ६ नीरोग होनेका सच्चा उपाय ७ आकृतिसे रोगकी पहचान ।

हमें विश्वास ह कि इन पुस्तकोंको सभी वर्गोंके पाठक पढ़ेंगे और इनसे लाभान्वित होंगे ।

—मंत्री

लुई फूने

भूमिका

महापुरुष लूइ कूनेकी जन्मतिथि तथा वंशका कोई पता नहीं लगता, न उनके माता पिताके बारेमें ही विशेष कुछ मालूम हो सका। वह जर्मनी के लिपजिगमें हुए थे। अपनी 'नवीन चिकित्सा' नामक पुस्तकमें उन्होंने बीस सालकी उम्रमें अपने बीमार पड़ने और तदर्थ सन् १८६४ में वहां के प्राकृतिक चिकित्सकोंके संपर्कमें आनेकी बात कही है। इस प्रकार उनका जन्म सन १८४० के आस-पास माना जा सकता है।

उस समयकी प्रचलित प्राकृतिक चिकित्सा प्रणालीसे पूरा लाभ न होनेपर कूनेने जल चिकित्साकी अपनी नई विधि निकाली। उससे स्वयं पूर्ण नीरोग होनेके साथ-साथ अन्य बहुतोंपर भी प्रयोग किये। सफलताओंसे उत्साहित होकर सन् १८८३ में लिपजिगमें उन्होंने अपना एक चिकित्सालय खोला। ९ साल बाद सन् १८९२ में उसे बढाना पड़ा। रोगी-संख्या निरन्तर बढते जानेके कारण सन् १९०१ में चिकित्सालयको और बड़ा करना पड़ा। कूने पत्र द्वारा भी बहुतोंको सलाह देते थे।

लगता है कूने पढ़े लिखे साधारण ही थे। उनकी जिस पुस्तक 'न्यू साइन्स ऑव हीलिंग'का दुनियाकी ६७ भाषाओंमें अनुवाद हुआ और जिसकी एक करोड़के लगभग प्रतियां बिकनेका अनुमान किया गया है, उसके विचार कूने द्वारा पहले पांच व्याख्यानोंके रूपमें लिपजिगमें सन् १८८८ में प्रकट किये गए थे। उन्हें हजारोंने सुना था।

उक्त पुस्तकके इतने अधिक प्रचारका वास्तविक कारण समझना तो कुछ कठिन ही है, पर इतना निःसंदेह कह सकते हैं कि आजतक चिकित्साकी किसी पुस्तकका दुनियामें इतना प्रचार नहीं हुआ, न अबतक दुनियामें दूसरी कोई ऐसी चिकित्सा पुस्तक ही निकली जिसके मार्फत लाखों, घरबैठ, कठिनतम रोगोंसे, बड़ी आसानीसे अपनेको मुक्त किया हो। संभव है, इस एक विशेषताके कारण यह पुस्तक इतनी सर्वप्रिय हुई हो। इस प्रकार लाखोंकी रोग-मुक्ति इस प्रणालीके सिद्धांतोंकी सच्चाईका

सबसे बडा सबूत है। अपने सिद्धातापर अटल विश्वासके सिवा कूनका वहन-समझानका ढग भी अत्यन्त सहज और प्रभावशाली था।

रोगोंके निदान और उनके उपचारपर विद्वानोंने अबतक हजारों भारी भरकम पोथे लिख छोड़े हैं। आज भी लिखते ही जा रहे हैं। चिकित्सा शास्त्र दिनोदिन इतना पेचीदा होता जा रहा है कि उसके अध्ययनमें कोई प्रखर बुद्धिका छात्र जिंदगीका एक अच्छा भाग गुजारकर भी कौड़ी काम का नहीं हो पाता, न उन पोथियोंमें लिखित चिकित्सासे कोई वास्तवमें रोगमुक्त ही हो पाता है।

इसके विपरीत कूनकी विधिकी तारीफमें कहा जा सकता है कि १ यह प्रणाली अत्यन्त सरल है। किसीकी सहायताके बिना भी केवल पुस्तक पढ़कर, अपना उपचार किया जा सकता है। हजारोंने ऐसा किया भी है। २ उपचारके साधन सर्वत्र सुलभ हैं। वही पांच तत्व (आकाश, पानी, मिट्टी, धूप, हवा) इसके साधन हैं, जिनसे शरीरकी रचना हुई है। ३ रोग जड़से आराम होता है। इसमें ऐसा नहीं होता कि एक दवा और कुछ समय बाद दूसरा उभरा। ४ जल्दी आराम होता है। ५ कोई खर्च नहीं है। ६ चीर-फाड़की जरूरत नहीं होती। ७ गंदी, जहरीली दवाएं पेटमें नहीं डालनी पड़ती। ८ रोगी हमेशाके लिए एक सही जीवन पद्धति सीख जाता है। ९ व्यक्तिमें दूसरोंके साधारण रोगोंका उपचार करने लायक ज्ञान और साहस आ जाता है। १० चिकित्साकालमें भी रोगीको खाट नहीं पकड़नी पड़ती। आराम होनेपर शीघ्र ही वह अपने सब कर्तव्य पूरे करने लगता है। ११ इस चिकित्सासे मनमें शान्ति और शरीरमें स्फूर्ति बढ़ती है। इसीलिए कुछ लोग इसे दैवी या सात्विक चिकित्सा भी कहते हैं। १२ इस चिकित्साको समझ और पकड़ लेनेके बाद व्यक्ति फिर किसी दूसरी चिकित्साके धोखेमें नहीं आता। १३ मनसे रोगका भय चला जाता है। व्यक्ति रोगको शत्रु न मानकर मित्र मानना सीख जाता है। वह रोगोंकी विभिन्नताके जालसे निकल जाता है। १४ इसकी निदान पद्धति भी अत्यन्त सरल और निभ्रम है।

कूनेके पहले, और बादमें भी, यूरोप तथा अमरीकामें अनेक बड़े-बड़े प्राकृतिक चिकित्सक हुए हैं—बहुत बड़े पंडित और चिकित्सा शास्त्रके

निष्णात विद्वान—एम० डी०, एल० एल० डी०—प्राकृतिक चिकित्सापर अनेक तक तथा पाडित्यपूण गभीर अध्ययन-योग्य ग्रथोके लेखक, पर उनके सब ग्रन्थोका समग्ररूपमें भी शायद इतना प्रचार नही हो पाया, जितना लूई कूनकी अकेली 'नवीन चिकित्सा' नामक पुस्तकका हुआ ।

कूनने अपनी प्रणालीको 'नवीन' कहा ह, पर भारतीय वेद और आयुर्वेदमें तो उनके प्रतिपादित सिद्धात हजारा साल पहलेसे, किसी-न किसी रूपमें, मौजूद ह। हा, कूनको उनकी खबर नही थी। कूने द्वारा उन्हे नवीन रूपमें रक्खा जरूर गया ह। आयुर्वेदम उन (पच कर्मादि स्नहन, स्वेदन, वमन, विरेचन, वस्ति) सिद्धातोंके साथ तो ओपधवाद बतरह घुला मिला हुआ ह । आयुर्वेदक प्रारभिक कालमें चिकित्साके सशोधन (Purificatory) और सशमन (Palliative) दोनो प्रकार जारी थे । इधर आकर तो सशोधन प्राय चला ही गया—केवल ओपध ही रह गई, पर यूरोप और अमरीकामे ये दोनो प्रणालिया अलग-अलग विकसित हुइ । वहा डाक्टर केवल सशमन चिकित्सा करते रह और प्राकृतिक चिकित्सक सशोधन चिकित्सा । आरभम वहा प्राकृतिक चिकित्साको सशमन प्रणालीसे निराश हुए रोगी ही मिले । इन सशोधन–प्राकृतिक–चिकित्सकोकी दृष्टिम डाक्टरी चिकित्साकी त्रुटिया बहुत खटकी । यह देखकर उन्हें दुख होना स्वाभाविक ही था कि रोगीको व्यय लम्बे समय तक डाक्टरी चिकित्सामें उलझाकर हरान किया गया, उसकी हाल बदतरकी गई। यदि वह रोगी आरभमें ही प्राकृतिक चिकित्सामें आया होता तो वही आसानीसे, बहुत जल्द, आराम हो सकता था। प्राकृतिक चिकित्सकोने अपन य विचार जनताके सामने खुलकर रक्खे। इससे विगडकर अनेक डाक्टराने प्राकृतिक चिकित्सकोपर मुकदमे दायर करवाय। कहते हैं, अकेले कूनेपर १५४ मुकदमे चलवाय गए जिन सबमें वह बदाग छूटे । जजोकी जोरदार राय रही कि यह चिकित्सा निर्दोष और उपयोगी ह ।

इसीके परिणामस्वरूप बलिनके नामी डाक्टर ब्रडने अपन रोगियो पर जल चिकित्साके प्रयोग करके देख और पाया कि डाक्टरी इलाजसे मियादी बुखारमें जहा ५० ६० प्रतिशत रोगी मर जाते ह वहा जल-चिकित्साके प्रयोगसे शत प्रतिशत रोगी अच्छे होते ह। तब उसने एक

तगड़ा निबंध लिखकर अपनी बिरादरीवालोंके (डाक्टरोंके) सामने यह तथ्य रक्खा । तबसे दुनियाके सभी समझदार डाक्टरोंने मियादी बुखारमें ठंडे जलका प्रयोग करना शुरू किया । पर डाक्टरोंका ध्यान इस सीधी-सी बातपर न जा सका कि वही सीधा सादा ठंडे जलका उपचार तथा उपवास अन्य रोगोंमें भी उतना ही अच्छा काम कर सकता है जितना कि मियादी बुखारमें करता है ।

आयुर्वेदमें निदान उसे कहा है, जिससे व्याधिका निर्देश हो—"निर्दिश्यते व्याधिरनेनेति निदान ।" हर चिकित्साकी अपनी अलग निदान पद्धति होती है । लूई कूनेने चिकित्साकी भांति ही अपनी निदान-पद्धति भी निराली रक्खी । वैसही अत्यन्त सरल भी । होना भी यही चाहिए था । जहां सब रोग एक मान गए हैं, वहां सब रोगोंके कारण भी अनेक क्या होने लगे ? कूनेने अपने निदानके संबंधमें लिखा है कि बहुतेरे स्त्री पुरुषोंको उन्होंने अपनी निदान-पद्धतिकी प्रत्यक्ष, व्यावहारिक शिक्षा दी और उन लोगोंने थोड़े ही समयमें उसमें दक्षता प्राप्त कर ली ।

कूनेने अपनी निदान पद्धति समझानेके लिए अंग्रेजीमें 'साइन्स ऑव फेशल एक्सप्रेशन' पुस्तक प्रकाशित की थी । वर्तमान पुस्तक 'आकृतिसे रोगकी पहचान' उसीका हिन्दी-अनुवाद है ।

यह पुस्तक भी 'नवीन चिकित्सा'से कम उपयोगी नहीं है । कूनेको भलीभांति समझनेके लिए इसका पढ़ना भी उसी प्रकार अनिवार्य है, जिस प्रकार 'नवीन चिकित्सा'का । निदान-पद्धतिके अतिरिक्त कूनेने इस पुस्तकमें और भी ऐसी अनेक बातें कही हैं, जो 'नवीन चिकित्सा'में छूट गई थीं ।

पाठकोंको यह जानकर आश्चर्य होगा कि कूनेकी निदान-पद्धति और रोगके कारणोंकी व्याख्या आयुर्वेदमें काफी मिलती है । कूनेने मिथ्याहार विहारको रोगका—दोष-संचयका—कारण माना है । आयुर्वेद भी कहता है—"मिथ्याहारविहारेण रोगाणामुद्भवो भवेत् ।" (चरक) । कूनेका कहना है कि उन दोषों—मलों—का कुपित होना ही रोगका कारण है । आयुर्वेद भी कहता है—"सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपिता मलाः । तत्प्रकोपस्यतु प्रोक्तं विविधाहित सेवनम् ।" (चरक)—सभी रोगोंका

कारण कुपित मल-दोष है, और उनके प्रकोपका कारण अनेक प्रकारके अहित आहार विहारका सेवन है।

कूनेका कथन है कि बढ जाने या फट पडनेतक दोष-सचय व्यक्तिको बिना अधिक कष्ट दिये शरीरमे सुप्त पडा रहता है। गर्मी-सर्दीकी वृद्धि पर अन्य किसी प्रकारका शारीरिक या मानसिक आघात पाकर वह सचय उभरकर रोगकी शक्ल पकडता है। आयुर्वेद भी दोष-सचय और उस सचयकी उत्तरोत्तर छ अवस्थाए मानता है—"सचय च प्रकोप च प्रसर स्थानसश्रयम। व्यक्ति भेद च यो वेत्ति दोषाणां स भवेद्भिषक" (सुश्रुत) १ सचय २ प्रकोप ३ प्रसर ४ स्थानसश्रय ५ व्यक्ति और ६ भेद। इनको जाननेवाला ही चिकित्सक कहा जायगा।

कूनने कहा है कि मेरी निदान-पद्धतिकी यह एक बडी खूबी है कि रोग फूट पडनेसे पहले ही हम रोगीकी शक्ल देखकर उसे आगे आनेवाले खतरे (रोग) से आगाह कर सकते है। उस समय—पूर्वावस्थामे—तो रोगको दूर करना अपेक्षाकृत सहज होता है। बादको बडी कठिनाई होती है। यही बात आयुर्वेदमे भी कही गई है। "चय एव जयेद्दोषम"—अर्थात् सचय-कालमें—प्रारभिक अवस्थामें—ही दोषोको दूर करना चाहिए, अन्यथा आगे वे ही दोष मजबूत हो जाते है

सचयेऽपहृता दोषा लभन्ते नोत्तरा गति ।
ते तूत्तरासु गतिषु भवन्ति बलवत्तरा ॥

लेकिन दोष-सचयको जाने कैसे? इसके लिए आयुर्वेदमे कहा गया है

दोषादीनां त्वसमतामनुमानेन लक्षयेत
अप्रसन्नेद्रिय वीक्ष्य पुरुषं कुशलो भिषक ।

—उस दोष-सचयको कुशल वैद्य रोगीकी अप्रसन्नता (यानी चेहरे अथवा त्वचाकी म्लानता) देखकर जाने।

लेकिन कूनेने अपनी इस 'आकृतिसे रोगकी पहचान' पुस्तकमे एक स्वस्थ शरीरका चित्र और मुकाबलेके लिए अन्य दर्जनो अस्वस्थ शरीरोके चित्र देकर इस विषयको इतना स्पष्ट कर दिया है कि दोष-सचयको जानने-के लिए अधिक कुशलताकी आवश्यकता नही रह जाती। एक मामूली

निवेदन

इस पुस्तकमें म अपने वर्षोंके अन्वेषण तथा अध्ययनके परिणाम जन-सामान्यके लिए प्रस्तुत कर रहा हू। मुझे विश्वास है कि इसका हार्दिक स्वागत होगा।

पाठकोंसे मेरा अनुरोध है कि वे इस पुस्तकका अध्ययन निष्पक्ष मस्तिष्कसे करें और जबतक स्वय व्यावहारिक अनुभव प्राप्त न करलें, तबतक इसकी उपयोगिताके विषयमें अपना फैसला न दें। दुर्भाग्यसे केवल इस पुस्तकको पढ लेनेसे ही निदानकी नई पद्धतिको पूरी तरहसे समझ लेना आसान नही है, कारण कि इसके चित्रोंमें व्यक्तियोंकी आकृति मात्र ही दी जा सकती थी शरीरके विभिन्न अगोंके रग और गति नही, फिर भी थोडा धैर्य रखनेपर जिज्ञासु पाठकोंको अवश्य सफलता मिलेगी। वस्तुत विभिन्न आकृतियोंकी अपेक्षा स्वस्थ रगको अधिक सुगमता से पहचाना जा सकता है। इस पुस्तकमे आकृतिया खूब दी गई हैं। इन आकृतियोंको पूरी तरह समझ लेनेपर मुखाकृति विज्ञानकी दिशामें अत्यन्त महत्वपूर्ण कदम उठा लिया गया, ऐसा मानना चाहिए। मै हर किसीको इस बातके लिए प्रोत्साहित करूगा कि वह निदानकी नई पद्धतिका मेहनतसे अध्ययन करे और जितनी जल्दी सभव हो सके, स्वय व्यावहारिक अन्वेषण आरभ करदे। अभ्याससे पूर्णता प्राप्त होती है, धैर्य लक्ष्यपर पहुचा देता है।

मुझसे बार-बार पूछा गया है कि म मुखाकृति विज्ञानकी स्थापना किस प्रकार कर सका हू। इस पुस्तकमें इसका जवाब आ गया है। इसमें बताया गया है कि किस तरहसे लगातार अन्वेषण करने, सोचने और परीक्षण करनेसे मै इन परिणामोंपर पहुचा हू, जिनकी मैंने स्थापना की है।

अपने चिकित्साके धंधेमें मैंने सन् १८८३ से मुखाकृति विज्ञानको स्थान दिया है और सन् १८८८ से बराबर इस विषयकी शिक्षा दे रहा

हू, शिक्षणका मेरा अनुभव यह है कि जिसके स्वस्थ आखें ह वह निदान-की नवीन पद्धतिको सीख सकता है और इसके लिए किसी विशेष प्रतिभाकी आवश्यकता नही ह । इन वर्गों द्वारा कुछ हदतक लोग मुखाकृति विनान के सिद्धान्तसे परिचित हो गये ह ।

इस पद्धतिकी खोज पहले-पहल मन की, मेरे इस अधिकारका विरोध करनके लिए प्रयत्न हुए ह। हम देखते ह कि एक प्रोफेसर तथा राज चिकित्सकने अपनी एक रचनामें, जिस उन्होन लीपज़िग विश्व विद्यालयकी मेडीकल फेकल्टीको समर्पित किया था, इस खोजको अपने दिमागकी उपज कहकर प्रकाशित किया है। साथ ही मन जो लक्चर दिये थे, उन्हें प्राय ज्यो-का-त्या अपना कहकर छाप दिया ह ।

हो सकता ह कि किसी समय एसे व्यक्ति हुए हो, जिन्होने शरीरकी बाह्याकृतिसे आतरिक स्थितिका निदान करनेकी कोशिशकी हो, लेकिन उनके प्रयत्नोका कोई व्यावहारिक फल नही निकला ।

मेरी हमेशासे इच्छा रही ह कि कुछ एसी चीज प्रस्तुत करू, जो वास्तवमें व्यावहारिक और हरकिसीके लिए लाभदायक हो। इसमें मुझ सफलता मिली है या नही, इसका निणय मैं अपन पाठकोपर छोडता हू ।

—लूई कूने

विषय-सूची

आकृतिसे रोगकी पहचान

१

विषय-प्रवेश

आकृतिसे रोगकी पहचान अथवा मुखाकृति-विज्ञान नवीन चिकित्साकी रोग-निर्णायक—निदान-पद्धति है। नवीन चिकित्साके सिद्धातोको पूणतया पचा पानेवाले ही इस नइ निदान-विधिको पूरी तरह समझ सकेगे। वे सिद्धात 'नवीन चिकित्सा'[१] पुस्तकको पढकर समझे जा सकते ह।

नीचे वे सक्षेपमे दिये जा रहे हैं—

१ रोगका कारण एक ही है। शक्लें उसकी भिन्न भिन हो सकती हैं, उसका ज़ोर कम-ज्यादा हो सकता है। शरीरके भीतरी भागमें रोग और उसके बाहर प्रकट होनेवाले लक्षण, पैतृक प्रभावो, उम्र, पेशा, निवास, खुराक, जलवायु, रहन-सहनके ढग आदिपर निभर करते है।

२ शरीरम दोप-सचय होनेपर रोग होता है। पहले-पहल यह दोप पेड़ूके निकटस्थ भागोमे एकत्र होता है। वहासे वह शरीर-के विभिन्न भागोमें जाता है—खासकर, गर्दन और सिरमे। इस विकारी पदाथ—दोप-सचय—के कारण शरीरकी शक्लमे फक

---

[१] 'सस्ता साहित्य मण्डल', नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित। मूल्य सजिल्द अढ़ाई रुपया।

चाहिए। साथ ही, यह भी समझना चाहिए कि आन्तरिक अवयवो की पहचान उनकी कार्य-प्रणालीसे कैसे की जा सकती है।

इसके लिए डाक्टर रोगीके शरीरको अगुलियासे ठोकता है, उसे छूकर देखता है, आकणन-यन्त्र द्वारा हृदयकी धडकन सुनता है और इन जरियासे वह अवयवोकी दशाका सिद्धात स्थिर करता है। निर्भ्रांत निर्णयके निमित्त अनेकानेक बारीक औज़ार बनाये गए है। इन सूक्ष्म और नाजुक औजारोके आविष्कारकाके बुद्धि-कौशलपर अचभा होता है। थर्मामीटरके साथ ही इधर माइक्रोस्कोप—खुर्दबीन—का महत्त्व भी बढ गया है,[1] क्योकि लगभग हर रोगका कारण कोई-न-कोई जीवाणु माना जाने लगा है। विज्ञानवेत्ता इन गरीब जीवाणुओके पीछे हाथ धोकर पडे है।

सपूर्ण डाक्टरी जाचमें भिन्न भिन्न प्रकारके पर्यवेक्षण होते हैं। लेकिन एक जाचसे दूसरी जाचका शायद ही कोई सबध रहता हो। पहले, डाक्टर रोगीसे तरह-तरहके जबानी सवाल करता है, फिर उसकी जीभ देखता है नाडी टटोलता है, फेफडे और हृदयकी दशा जाननेको उसकी छाती और पीठ ठोकता-बजाता है। फिर लीवर, यकृत और पेटको दबाकर देखनेका स्वाग चलता है। उसके बाद गुप्तागोकी जाचका नम्बर आता है। स्त्रियाके गुप्तागोको तो परिदर्शक यन्त्र द्वारा देखा जाता है। खूनकी गर्मी थर्मामीटर द्वारा देखी जाती है। खून, लार, थूक, पेशाबके कण-कणकी जाच की जाती है। फिर अलग-अलग अगोकी, जसे, आख, नाक, कानकी जाच की जाती है। प्राय इन अगोकी जाचके लिए रोगीको इन

[1] कूनेके द्वारा उपयुक्त पक्तियाँ लिखी जानेके बाद तो इन जांचों के लिए और कितने ही औजार निकल आये है, जिनमें इस समय 'एक्सरे' का फ़ैशन सबसे ज्यादा है। —अनु०

अगोके विशेषज्ञोके पास भेजा जाता ह। अतमे डाक्टर फतवा क्या देता है? अमुक-अमुक अवयव तो बिल्कुल ठीक है, अमुक अगमे थोडी-सी खराबी (Slightly damaged) आइ है, और तीसरा तो बिल्कुल ही खराब हो गया है। सपूण शरीरकी दशाके सबधमें, उसकी जीवनीशक्तिके सबधमे, तो शायद ही कोइ फिकरा कहा जाता हो। इतनी माथा-पच्ची—जाच-पूछ—का कोइ खास नतीजा नही निकलता। चिकित्सक इतना तो रोगीसे पूछकर ही जान लेता है। वर्षाके अभ्यासमे उसमे इतना कौशल तो आ ही जाता है कि रोगीकी सूरत-शक्लसे ही कुछ बाते जान ले। फिर निदानका यह इतना आडबर क्यो? इन कारवाहियाको व्यर्थ महत्त्व देनेसे किसका क्या लाभ होता है?

पहली बात, ये जाचें प्राय अविश्वसनीय होती ह। अलग-अलग डाक्टरोकी जाचका नतीजा इतना भिन्न होता है कि सुनकर पाठक आश्चय करगे। बडे-बडे विशेषज्ञ तक निदानम प्राय एकराय नही होते। दोष-सचयसे तो उसे कोइ मतलब ही नही होता। अधिक-से-अधिक दोष-सचयवाले रोगीको भी डाक्टर प्राय नीरोग कहते देखे जाते ह। इधर रोगी अपनेको बिल्कुल अस्वस्थ मान रहा है और कष्टसे बेचैन हो रहा है, विशेषत नाडी-दौर्बल्य-के मरीजोके साथ तो यही होता है। वह बेचारे यह सुनकर बडे निराश होते ह कि उन्हे कुछ नही है, जबकि वे बुरी तरह कष्ट-पीडित होते हैं।

औषध विज्ञानकी यह अनिश्चितता बिल्कुल स्वाभाविक है, क्योकि, अभी तक इन पुराणपथी डाक्टराने रोगकी प्रकृति ही नही पहचानी है। दूसरे, औषध-विज्ञानियाका निदान उपयुक्त उपचारके लिए कोइ बुनियाद नही देता। जहा निश्चित रूपसे

कहनेकी गुजाइश है, वहा भी यह किसी नतीजेपर नही पहुचता, क्योकि डाक्टर प्राय यही मानकर चलता है कि शरीरके भिन्न भिन्न अग दूसरे हिस्सासे असबधित रहकार स्वतत्र भावमे रुग्ण होते ह और इसीके अनुसार उपचार किया जाता है।

इनके बेकार और घातक निदानके अनगिनत उदाहरण मेरे पास है। यहा नमूनेके लिए सिर्फ तीन उदाहरण काफी होंगे।

१ एक व्यक्ति जीभकी सूजनसे बहुत कष्ट पा रहा था। इसके निदानमे डाक्टरको कोइ कठिनाइ नही थी। उसे उपचार केवल जीभका बताया गया, क्योकि इसीको डाक्टरने कष्टका स्थान माना था। परिणाम तो असतोषजनक होना ही था। रोगीकी दशा बिगडती गइ। जीभ सूजती ही गइ, यहातक कि अब वह मुहको हिला-डुला भी न सकता था। इस हालतमें वह मेरे यहा लाया गया। मैंने मुखाकृति विज्ञानके सिद्धातानुसार निदान करके उपचार बतलाया और वह बिल्कुल अच्छा हो गया।

२ बर्लिनके एक कुनबेमें एक बच्चा महीनोसे बीमार पडा था। एक प्रसिद्ध प्रोफेसर चिकित्सकने बतलाया कि रोग पुआल पर पनपनेवाले कुछ जीवाणुओके कारण हुआ है। यद्यपि वह बच्चा पुआलके पास कभी गया ही न था, तथापि अणुवीक्षण यत्र जो कह रहा है, वह कैसे झूठ हो सकता है? डाक्टरने उन जीवाणुओका नाश करना अपना फर्ज समझा। परिणाम दुर्भाग्य पूर्ण था। बच्चेकी हालत दिनदिन खराब होती गइ और साथ-साथ जीवाणु भी बढते गए। इसी समय घरवालोका ध्यान मेरी चिकित्साकी ओर गया। मैंने मुखाकृति विज्ञानसे उसकी जाच की। जीवाणुओके बखेडेको किनारे रखकर मैंने उपचार बतलाया। रोगी चगा हो गया। डाक्टरको मेरे उपचारके बारेमें

कुछ बतलाया नही गया। इस बीच उसे सिर्फ खूनकी जाचके लिए बुलाया गया, तो उसने अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा बडे आश्चयसे देखा कि जीवाणु असाधारण रूपसे घट गये ह। इसपर वह बोला क्या कि कभी-कभी कुदरत स्वय इन जीवाणुओका नाश कर देती ह।

३ मिस्टर एम० मजबूत ढाचेका आदमी था। बीमारीके कारण दस वष तक निकम्मा बना रहा। वह आत्महत्या करनेकी फिक्रमे था। घरवालोको उसपर बराबर निगाह रखनी पडती थी। कितने ही डाक्टर जाचके बाद इसी नतीजेपर पहुचे कि वह सिफ मनके विषादसे ग्रस्त है। उसे कही पहाडपर जाकर हवा-पानी बदल आना चाहिए। उसका भी कोइ नतीजा न निकला। मेरे यहा लानेपर मने मुखाकृति-विज्ञानकी दृष्टिसे उसके शरीरमे भयकर रूपसे दोष-सचय पाया। मेरी विधिके अनुसार उपचार करनेपर कुछ ही महीनोमे मि० एम० नये आदमी हो गये—खुशखुरम। अब बिना किसी हिचकिचाहटके उनके हाथम पिस्तौल दी जा सकती थी।

निदानका यह पुराणपथी तरीका बिल्कुल व्यथ है। उसका आधार ही गलत है। उसके अनुसार उपचार करके रोगीको कोई फायदा नहीं हो पाता। इसकी यह मान्यता कि एक अग दूसरे अगोसे कोई सबध न रखकर स्वतन्त्र रूपसे रुग्ण होता है, बिल्कुल वाहियात हैं। इसी गलतफहमीके परिणामस्वरूप हर अगके अलग विशेषज्ञ पैदा हुए ह। यह बला इतनी बढ गइ है कि अब डाक्टर तक इसका विरोध करने लगे हैं। यह भी सभव है कि आगे किसीके आख, कान और नाकमें एक साथ तकलीफ पैदा हो तो अलग-अलग तीन विशेषज्ञ बुलाये जाय! कोइ दूसरा अदरुनी

रोग और हुआ तो एक चौथा भी पहुचेंगा।

डाक्टर स्वय स्वीकार करते हैं कि अवतक उन्होने रोगकी वुनियादका पता नही पाया है। रोगकी प्रकृतिके सवधमे उनमें परस्पर मतभेद वना रहता है, पर उनके दलसे वाहरका आदमी कोइ नइ चिकित्सा वतलाये तो यह पुराणपथी जामेसे वाहर हो जाते ह।

अगर कोई डाक्टर कही कामयाव होता है तो उसका कारण है कि अपने निदानके वावजूद वह सारे शरीरका साधारण उपचार वतलाता है। अधिकाश स्थलोमें सफलता तात्कालिक होती है और वह भी कुछ विशेष लक्षणोको दवा देनेके कारण।

ओषधिया रोगोको दवाती ही है, निकालती नही। जसे, पारेकी ओषधिया, कभी वास्तविक निरोगिता नही लाती, वल्कि रोगको विगाडती है। इनके द्वारा यौन रोगके (Sexual diseases) कुछ लक्षण दवा जरूर दिये जाते है। पारेके द्वारा अच्छे हुए कहे जानेवाले रोगियोकी बुरी हालत देख कर वडा अफसोस होता है। इसी प्रकार मार्फिया, आयोडिन, ब्रोमाइन, कुइनीन, ऍटीपायरिन और आसनिक आदिका वडा भयकर परिणाम होता है।

डाक्टर किसी रोगका पता तव पाते ह जव वह खूव वढ चुका होता है। रोगके प्रारभ कालमें तो वह कुछ भी नही जान पाते। न उनको यही पता लगता ह कि वीमारी आगे कितनी वढ़ेगी। रोगकी प्रथमावस्थामें ही (दोष-सचय-कालमें) उसका पता लगा लेना और यह समझ लेना कि वह क्या रास्ता अख्तियार करेगा, वहुत आवश्यक है। उस दशामें हम तुरत उसका उपचार

करके बहुत आसानीसे उसे दूर कर सकते ह।

होमियोपैथी ऐलोपैथीमेंसे ही निकली है और इसके अधिकाश अभ्यासी निदानके पुराणपथी तरीकेको ही अपनाये हुए ह, बल्कि वे ऐलोपैथीसे भी अधिक सूक्ष्म जाचके चक्करमें रहते है।

होमियोपैथीमें बाहरी लक्षणोसे रोगकी पहचानका तरीका भी माना जाता है। निस्सदेह बहुत मामलोम यह नवीन चिकित्सा-की निदान विधिसे मिलती है। फिर भी होमियोपैथीमें निदानकी कोइ स्पष्ट, निश्चित प्रणाली नही है। इसकी चिकित्सा प्राय रोगी या रोगीके घरवालेके रोग-सबधी विवरणपर ही निभर करती है।

रोगीके वास्तविक उपचारमें होमियोपैथीने जरूर कुछ तरक्की की है, क्योकि औषधिकी अल्प मात्रा शरीरको बडी मात्राकी भाति अशक्त नहीं करती, बल्कि एक जीवनप्रद प्रभाव डालती है। दुर्भाग्यवश बहुत से होमियोपैथ विषैली दवाओकी बडी मात्राका इस्तेमाल भी करते ह।

२

मुखाकृति-विज्ञानकी पद्धति

केवल नामसे किसी वस्तुकी प्रकृतिके वास्तविक रूपका पता लगानेकी कोशिश करना गलत है। वैसे तो मुखाकृति विज्ञान शरीरके सारे अवयवोंसे संबंध रखता है, पर मुख (चेहरा) शरीरका सबसे पहले ध्यानमें आनेवाला भाग है और उसपर मानसिक और शारीरिक सारी आंतरिक क्रियाएं प्रतिबिंबित होती है। अतः सबसे पहले उसीको देखना आवश्यक है। निदानके इस नये तरीकेको इसीलिए यह नाम दिया गया है।

ऐसा कोई रोग नहीं होता, जिसमें शरीरका कोई खास हिस्सा ही प्रभावित होता हो। रोगकी हर हालतमें सारे शरीरको तकलीफ बेचैनी (बेआरामी) होती है। यों तो रोगकी हालतमें सबके शरीरके वर्ण (रंग) और आकृतिमें फर्क पड़ जाता है, पर कुछ खास स्थानोंपर यह परिवर्तन इस रूपमें होता है कि उसकी परीक्षा की जा सके। अवयवोंकी गति विधिका ढंग भी बदल जाता है, लेकिन परिवर्तन पूरी तरह प्रकट होनेतक ध्यानमें नहीं आता। दोषसे लदे हुए शरीरकी क्रियामें स्वस्थ शरीरकी अपेक्षा अंतर रहता है। जैसे लकवा या कमजोरी अथवा फीलपावके कारण पांवोंके फूल जानेपर मनुष्यकी चालमें फर्क पड़ जाता है। चालसे उसकी बीमारीका अंदाज किया जा सकता है। मुखाकृति विज्ञान इन सबपर ध्यान देता है। शरीरकी बनावट, परिचालन, रंग गति ये सब सावधानीसे देखे जाते हैं, पर फर्कको परखनेके लिए हमें पहले मनुष्यके स्वस्थ शरीरका अध्ययन करना आवश्यक है।

स्वस्थ मनुष्य

आज जो हालत ह उसमें, उदाहरणके लिए भी, पूण स्वस्थ मनुष्य पाना मुश्किल हैं। जगली जीवोमे तो सभी स्वस्थ होते ह। उनमें बीमार तो कोइ ही मिलेगा। इसलिए उनम स्वाभाविक—आदश आकृतिका पाना आसान है, पर सभ्य मनुष्यमें वह उतना ही मुश्किल है।

मैं मनुष्य-शरीरकी स्वाभाविक आकृति एक हद तक ही वनानेमे सफल हुआ हू। सवप्रथम म शारीरिक क्रियाओके अध्ययन-से इस परिणामपर पहुचा कि वास्तविक स्वास्थ्यके लिए शरीर कैसा होना चाहिए, क्योंकि स्वस्थ शरीरको अपनी सब क्रियाए सुगमतासे सम्पादन करने योग्य होना चाहिए, विना किसी तक-लीफके, विना किसी कृत्रिम उत्तेजनाके। सवप्रथम उन क्रियाओ-का स्थान होगा, जो शरीर-निर्वाहके लिए अत्यावश्यक ह, जैसे, खुराकका पाचन और मलका निष्कासन। स्वस्थ मनुष्यको वह सच्ची भूख लगती है, जिसमे प्राकृतिक खुराक द्वारा पूरी तृप्ति होती है। पेटके ठसनेसे होनेवाली किसी प्रकारकी वेचैनी अनुभव होनेके पहले ही वह तृप्ति आ जाती ह। पाचन-काय इतना चुपचाप चलता है कि व्यक्तिको उसका पता भी नही चलता। खानेके वाद भारीपन और भाति-भातिकी तकलीफें, तेज मसालेदार खुराक और तीखे पेय पदार्थोकी इच्छा, नितात अप्राकृतिक है और रोगका चिह्न है। प्यास लगनेपर केवल पानीकी इच्छा होनी चाहिए। पेशाब आनेमे कोइ कष्ट नही होना चाहिए, न उसे अधिक गम होना चाहिए। वण-विहीन, सुर्ख रगका, काला, मैला या गाढा नही होना चाहिए। साधारणत इसका रग हल्का पीला—वादामी (गोमूत्र वर्णका) होना चाहिए। हरा, धूम्र वण और सफेद, रक्त

वण और कृमियुक्त नही होना चाहिए। पतला मल भी वैसे ही रोगका चिह्न है, जैसे सख्त, काली गाठकी शक्लमें।

स्वस्थ दशामें त्वचामें कोइ बदबू नही आनी चाहिए, जसी कि मासाहारी जीवोकी त्वचासे आती ह। त्वचा नम होनी चाहिए, पर लसलसीहुइ नही। स्पशम हल्की, गरम और कोमल होनी चाहिए, रूखी नही। लचीलीहोनी चाहिए, बालवाले स्थानामे सुदर और भरपूर बाल होने चाहिए। गजापन रुग्ण शरीरका परिचायक है। स्वस्थ शरीरमें फेफडे अपना काम बिना किसी कठिनाइके पूरा करते हैं। हवा नथुनोमे, जो उसके प्राकृतिक रक्षक है, जानी चाहिए। मुह खुला रहना, चाहे दिनको, चाहे रातको, रोगका सबूत है।

कभी श्रम अधिक हो जानेपर स्वस्थ शरीर हमे थकानकी सही सूचना दे देता है। यह थकान कष्टकारक न होकर सुखद होती ह और हमे आराम करनेकी, और अतमें सोनेकी प्रेरणा देती है। स्वस्थ दशामें निद्रा शात और गाढ होती है। स्वस्थ व्यक्ति जगनेपर प्रसन्न मन और प्रसन्न वदन तथा तृप्त होता ह, अलसाया और परेशान-हाल नही। स्वस्थ व्यक्ति कोइ गभीर मानसिक पीडा होनेपर रोकर शीघ्र हल्का हो जाता है। प्रकृतिने हमें आसू आतरिक कष्ट धो बहानेको दिये है।

स्वस्थ मनुष्यके ये सारे चिह्न तुरत अनुभूति द्वारा और बहुतेरे तो बिना किसी कृत्रिम औजारके आखोसे देखे जा सकते है। उपर्युक्त सारे लक्षण जीवित व्यक्तियाको देखकर निश्चित किये गए हैं। मृत शरीरको लेकर किया जानेवाला निरीक्षण बेकार है।

उपर्युक्त लक्षणो और दशाओसे सयुक्त पूण स्वस्थ मनुष्यकी

शक्ल (डौल) भी सही होनी चाहिए। उसका शरीर पूणतया दोष-रहित होना चाहिए।

अवतक म एक भी पूण स्वस्थ मनुष्य नही पा सका हू। औसत दर्जेके स्वस्थ मनुष्य तो मुझे प्राय मिले ह। मैंने उन्हीके आधार-पर शरीरकी स्वस्थ (स्वाभाविक) आकृतिका अध्ययन किया है। कहा जा सकता है कि सौंदय-विज्ञानकी दृष्टिसे भी स्वस्थ शरीरकी आकृति ही आदश होती है। प्राचीन ग्रीक मूर्तिकारोने हम वास्तविक सुन्दर आकृतिया दी ह, और इन्हीको हमारे वतमान मूर्तिकार आदश मानते ह, न कि उन पेटू—खाऊ, मोटे-सोटे स्त्री-पुरुषोको, जिन्हे आमतौरसे आज स्वस्थ समझा जाता है।

स्वाभाविक आकृति

पाठकोको कुछ स्वाभाविक आकृतिया चित्र १, ३, ८, ६ और १४ में मिलेंगी। उनका वणन आगे दिया जा रहा है।

१ **आकृति—**चित्र १ की आकृति स्वाभाविक आकृति है। इसमें समूचे शरीरम उत्तम अनुपात है। देखनेमें यह आकृति अति सुदर मालूम होती है। इसके साथ चित्र २ की आकृतिको देखने पर वह, कितनी भद्दी—वदशक्ल—जचती है। शरीर पसरा हुआ है। पैर, धडकी तुलनामे बहुत छोटे ह। धड अस्वाभाविक रूपसे लवा है और गर्दन तो करीव-करीव गायब ही ह।

स्वाभाविक आकृतिमें (चित्र १) सिर औसत आकारका है। गदन गोल है। न अधिक छोटी, न अधिक लवी और घेरेमें यह लगभग पावकी पिंडलीके बरावर है। छाती धनुषाकार है। पेट आगे निकला हुआ नही है और न धड नीचेकी ओर लवा है। पावोकी वनावट मजबूत ह, न यह आगे झुके ह, न पीछे।

स्वाभाविक स्वस्थ व्यक्तिम और चिह्न भी पाये जाते ह।

चित्र ३—स्वाभाविक आकृति
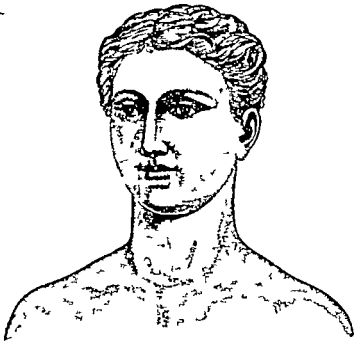
चित्र ४—स्वाभाविक आकृति

उसके माथेपर शिकन—झुर्री—नही होती और न सपाट चर्बीली गद्दी ही दिखाइ देती है। आखें स्वच्छ होनी चाहिए। उनमें धारिया नही होती। नाक चेहरेके बीचो-बीच और सीधी रहती है, न अधिक मोटी, न पतली। मुह हमेशा बद रहता है, दिनमें और रातको सोते समय भी। ओठोकी बनावट सुदर होती है, वह अधिक मोटे नही होते है। चेहरा अडाकार होता है, कोना-कोनी नही। कानके ठीक नीचे अलगाववाली लकीर साफ रहती है। यह स्पष्ट रेखा (Demarcation line) ही सौष्ठवकी निशानी है। यह चेहरेकी शोभा बढाती है। बहुतोको इस प्रकारका चेहरा देखनेमे सुदर तो लगता है, पर वे बतला नही सकते कि वह सुदरता है कहा ?

ठुड्डी गोल होनी चाहिए, कोणाकार तो बिल्कुल नही। सिरका पिछला भाग गर्दनसे एक स्पष्ट रेखा द्वारा विभक्त होना चाहिए।

२ रग—चेहरेका रग पाण्डु—पीला—नही होना चाहिए और न अत्यधिक सुर्ख। चेहरेपर चमकीलापन नही होना चाहिए।[1] चेहरेपर ताजगी होनी चाहिए। बुढापे तक उसपर तेजस्विता रहनी चाहिए।

३ गतिशीलता—शरीरकी दशापर विचार करते समय उसकी गतिशीलताका विचार भी आवश्यक है। यदि शरीरकी किसी स्वाभाविक क्रियामें बाधा पडती है तो समझना होगा कि शरीरकी दशा स्वाभाविक नही है और उस अगमें दोष-सचय हुआ है। खासतौरसे मुखाकृति विज्ञानके निदानमें सिरके परिचालनका

---

[1] यूरोपवालोका स्वाभाविक रग कुछ पीला-गुलाबी होता है।

विशेष महत्त्व है। मुखाकृति-विज्ञानके अनुसार स्वास्थ्यकी जाचमे सिर निर्बाध रूपसे दाहिने, बायें घूमने योग्य होना चाहिए। सिरको उठानेम गलेपर कोइ तनाव नही होना चाहिए, और न गदनके नीचे झुकानेमे उसके पिछले भागम।

शक्ल, रग और गतिशीलतासे शरीरकी जाचका यह तरीका है।

शरीरमें दोषसचय

यदि शरीरकी आकृति और रग स्वाभाविक नही रह गये है या उसकी गतिशीलताम बाधा पडने लगी है तो यह इस बातका सबूत है कि शरीरमे दोप-सचय हुआ है। यह सचय किसी पदाथ (matter) का ही माना जायगा। यही पदाथ ह, जो शरीरकी आकृतिमे फक डालता है। यहा यह सवाल उठता है कि जो पदाथ शरीरसे कोइ सबध नही रखता और इसलिए दोप—विजातीय पदाथ—कहलाता ह, मनुष्यके शरीरम आता कहासे है? इस पदाथके शरीरम जानेका रास्ता वही है, जो दूसरे पदार्थोके जानेका है।

पदाथ शरीरमें मुख, नाक और त्वचाके रास्ते जाता है। नाक, फेफडो और त्वचा द्वारा हम श्वास—हवा—अदर लेते ह। मुहसे शरीर ठोस और तरल पदाथ लेकर पेटको सौंपता है। प्राकृतिक मागपर चलते रहनेमे दोष शरीरमे नही पहुच पाता और पहुच भी जाय तो शीघ्र बाहर निकाल दिया जाता है, क्योंकि प्रकृतिकी ओरसे शरीरमे ऐसा प्रबध है कि हानिकर द्रव्य निकाल दिये जाय।

आते, मूत्राशय, त्वचा और फेफडे स्वस्थ शरीरमे निरतर काम करते रहते ह और प्रत्येक बकार पदाथको, जिसकी शरीरको

कोइ आवश्यकता नही रह जाती है, वाहर निकालनेके काममें लगे रहते हैं। फिर भी शरीरमे दोप अत्यधिक मात्रामे पहुच जाने पर शरीर उसे वाहर निकालनेमें असमथ हो जाता है और उसका कुछ भाग अदर रह जाता है।

वहुतेरे बच्चे तो ज मसे ही दोप-सचय लिये हुए पैदा होते हैं कहा जाय तो एक प्रकारसे वे रोगी ही पदा होते ह। इनमेंसे अधिकाश तो अकालमें ही कालके गालम चले जाते ह।

मनुष्यके लिए सबसे आवश्यक वस्तु खुराक है। इसके प्राकृतिक होनेसे शरीर भी प्राकृतिक रूपमें बढता ह। बच्चेकी वास्तविक प्राकृतिक खुराक तो माका दूध ही ह। आज दुर्भाग्यवश वहुतसे बच्चे (खासतौर से शहरी जीवनमे) इससे वचित ही रह जाते ह, क्योकि माके शरीरस अधिक दोप-सचयके कारण उसे दूध नही उतरता, या बिल्कुल कम उतरता है। आरम्भके महीनोंमें माके दूधके बदले बच्चेकी सर्वोत्तम खुराक कच्चा, बिना उबला बकरी या गायका दूध है। उबले दूधका या कीटाणुरहित (pasturiz ed) दूधका बच्चोके स्वास्थ्यपर होनेवाला हानिकारक प्रभाव चित्र ४८ से ५१ तकमें दिखाया गया है। ये चित्र असली फोटुओसे बने हैं। लेकिन कोई खुराक माके दूधकी वरावरी तो कदापि नही कर सकती।

अप्राकृतिक खुराक कभी पूरी तरह नही पचती। नित्य वैसी खुराक लेते रहनेपर परिणाम बुरा होता है। शरीर उस खुराकके मलको ठीक तौरसे निकाल नही पाता। साथ ही, उस खुराकसे शरीरको वास्तविक पोपण-तत्त्व भी नही मिल पाते।

दोप शुरूमें शरीरके निष्कासन-मार्गोंके निकट जमा होता ह और कुछ समय तक तो छोटे उभारो—जैसे अतिसार, अति स्वेद

और अतिरिक्त पेशाबके द्वारा शरीरसे बाहर कर दिया जाता है। इस तरह कभी-कभी तो बडे बडे सचय भी निकल जाते ह, फिर भी कुछ तो प्राय बच रहता है, या नया द्रव्य जमा हो जाता ह। जिस भागम यह द्रव्य—दोष—जमा होता है, उस भागमे उष्णता (गरमी) पदा होती है। (अतिमारका यह सीधा सबब है और दोषके रूप परिवतनका भी।) दोष प्रकुपित होने लगता है और गैस बननी शुरू हो जाती ह। यह गैस शरीरम फल जाती है और शरीरसे पसीनेके रूपमे त्वचा द्वारा गैस रूप बना हुआ दोष निकल जाता ह। लेकिन कुछ हिस्सा फिर ठोस रूपमें शरीरमे जमा हो जाता है। यही वह भडार द्रव्य है, जो शरीरको दोषपूण करता है। सचित द्रव्य किस ओर एकत्र हुआ है, यह देखकर रोगकी प्रकृति जानी जा सकती ह। मेदे और बडी आतोके कमजोर हो जानेपर प्राकृतिक और पूण खुराक भी ठीक तरहसे हजम नही होती। एसा अधूरा पचा हुआ, शरीर द्वारा अभिशोषित सारा द्रव्य दोषका रूप ले लेता ह। एक बार इस प्रकार विकारका एकत्र हो जाना शुरू हो जानपर फिर यह सिलसिला तेजीसे बढता है और शरीरम गडबडी आरभ हो जाती है। बच्चोके अनगिनत रोगोका यही कारण ह, जो शरीरके दोषोको बाहर निकालनेके उद्देश्यसे ही होते ह।

दूषित द्रव्य शरीरम प्राय श्वास—फेफडो और त्वचा द्वारा भी प्रवेश पाता है। सामान्यत तो वह निकलता जाता है, पर अक्सर अदर जमा भी रह जाता ह। पाचन शक्ति अच्छी होनेपर तो शरीरम फेफडो द्वारा गये दूषित द्रव्योको निकालनेकी यथेष्ट शक्ति रहती है, लेकिन पाचन कमजोर रहनेपर तो यह असभव होता है। अस्वच्छ हवामे रहकर हम दूषित पदार्थोको

दबानेसे ही होते है। ऐसे लक्षणोमे कफको गिना जा सकता ह। थूके जानेवाले कफमे बडी मात्रामें दोष निकलता है। यदि कफ-नाशक औषधिया द्वारा अतिरिक्त गर्मी पहुचाकर, या ताजी हवा रोककर, कफको दबा दिया जाता है, तो उसका परिणाम शरीरके लिए बहुत हानिकारक होता ह, विशेषत फेफडाके लिए। दोष सीधे भी रक्तमें प्रवेश पा सकता है। उस दशामें साधारण ढगसे अदर जानेकी अपेक्षा वह अधिक हानिकर सिद्ध होता ह। उसका एक विशेष उदाहरण है—साप काटना। इस दशामें जहर सीधा शरीरमे पहुच जाता है। तेजीसे काम करता है और शरीरम एक उफान और तेज बुखार ला देता है। यदि उतना ही जहर आदमीके पेटमे पहुचाया जाय तो विशेष हानि न होगी, क्योकि पेटम यह अहानिकर हो जाता है और उसका बडा भाग आतोसे बाहर निकल जाता है। यही हालत पागल कुत्तेके काटनेमे होती है।

सभी दूषित पदाथ इस प्रकार सीधे रक्तम जानेपर इतनी जल्दी या ऐसा भयकर प्रभाव नही डालते, फिर भी यह हानिकर तो हमेशा ही होता है। किसी आकस्मिक कारणसे दूषित पदाथका घावो द्वारा रक्तमें प्रवेश कर जाना सकटजनक होता है। इस हमे अपनी कोशिशभर रोकना चाहिए। पर ऐसे पदाथको जान-बूझकर रक्तम प्रवेश कराना तो एक भारी जुमके समान ह। टीके या इन्जेक्शना द्वारा विषोको—दूषित पदार्थोका शरीरमें पहुचाना एक ऐसा भयकर काय चल पडा है कि इतिहासमें ढूढनेसे भी इसकी मिसाल नही मिलेगी। यह एक दुखद बात है कि सभ्यताने अपनेको यहातक गिरा दिया ह। यदि सारी मनुष्य-जातिको रुग्ण होनेसे बचाना हो और उसे अधिक कमजोर न

होने देना हो तो यही वह वक्त है जबकि टीकेका विरोध होना चाहिए। शरीर यदि किसी हदतक स्वस्थ हो तो वह उस विषका कुछ अश निकालनेम समथ होगा। सामान्यत इन्जेक्शनके स्थानपर सूजन आकर वह स्थान पक जाता है। फिर भी, जहरका बहुत भाग प्राय शरीरमें रह जाता है। शरीरम जीवनीशक्तिकी कमी होनेपर वह उस विषाक्त पदार्थको मुश्किलसे ही निकाल पायेगा और उसका बडा अश शरीरके भीतर बच रहेगा। ऐसे ही लोगोको, पहले टीकेको 'असफल' बतलाकर दुबारा और तिबारा टीका लगाया जाता है। वास्तवम तो यहा 'सफलता' बहुत अधिक हुइ कि शरीरने स्वय उस विषको निकाल दिया। पर दुर्भाग्यवश समझा गया उल्टा। पहले मौजूद दोषमें और दोष (दुबारा और तिबारा टीका देकर) जोड दिया गया।

दोष-सचयके कारण शरीरमें होनेवाले परिवर्तन

पूर्वोक्त कथनानुसार दोष अपनी स्थितिके लिए उपयुक्त स्थानकी खोज करता है। द्रव्यका यह सग्रह पहले पेडूमें एकत्र होता है। निष्कासन-मार्गके नजदीक जमा होना शुरू होकर विकार दूरतक बढने लगता है, जैसे, सिर और हाथ-पैरोकी ओर। कोइ विशेष परिस्थिति पैदा न होनपर तो यह क्रिया बहुत धीरे धीरे होती है। द्रव्यका झुकाव प्राय शरीरकी चरम सीमाकी ओर जानेका रहता है। इस प्रयासमें वह अपना मार्ग गर्दनके तग भागसे बनाता है। वहा वह जमाव आसानीसे देखा जा सकता है। पहले तो वह भाग बढा हुआ लगता है, फिर वह सूजन अथवा पिंड रूपमें हो जाता है। आगे चलकर वह पिंड नीचेके अवयवको बिल्कुल ढक लेते है और उन भागोका विश्लेषण और सकोचन होने लगता है। इस दशामें अनाडी पर्यवेक्षक सहजमें धोखा खा

सकता है। वह कोई सचय नही मानेगा। फिर भी ध्यानसे जाचने पर हमेशा कडी रेखाए दिखाई देगी, जिनके कारण गदनकी अस्वाभाविक स्थिति होगी। त्वचा भी बदरग होगी, प्राय भूरी, स्लेटी या अतिरिक्त सुर्ख। कभी-कभी साधारण बुद्धिसे भी हम सचयकी प्रकृतिको समझ सकते है, फिर भी रोगको स्पष्ट रूपसे समझनेके लिए प्रत्येक विवरणको ध्यान देकर देखना चाहिए।

शोथ गदन और सिरमें वही शक्ल लेती है जो पेडूमें, और दोनो भागोमें समान रूपसे बढती है। फिर भी कभी-कभी पेडूका सचय घटता है और गदनवाला बढता है। इधर जल चिकित्सामे गदनका सचय घटने लगता है और उसी अनुपातसे पेडूका बढने लगता है।

दोष पेडूसे सिरकी ओर बढनेकी हालतमे हमेशा एक ही माग नही पकडता। यह सभवत उन-उन अवयवोकी जीवनीशक्ति-पर निर्भर करता है, जिधरसे कि दोष गुजरता है। कुछ-कुछ आदमीके सोनेकी करवटकी दिशापर भी निर्भर करता है। दोष शरीरके सामनेके भागमे बढ सकता है अथवा बगल या पीछेके भागमें। इस दृष्टिसे हमें तीन प्रकारके सचय मिलते है।

१ सामनेका—अग्र-सचय

२ बगलका—दोनोमसे किसी बगलका सचय (वाम पार्श्व-सचय, दक्षिण-पार्श्व-सचय)

३ पीठका—शरीरके पीछेके भागका—पृष्ठ-सचय

बगलका सचय दाहिनी या बाई ओर हो सकता है। साधारणत हम केवल एक प्रकारका सचय नही पाते। प्राय वह मिला-जुला ही होता है, जैसे सामने या बगलमे, या बगलमें या पीछे, या कभी-कभी सारे शरीरमें। फिर भी भिन्न प्रकारोको

सिर—आकार सामान्य, मस्तक—झुर्रीदार, आंखें—सामान्य, नाक—सामान्य, गाल—सिकुड़न पड़ी हुई, मुह—सामान्य, चेहरा—उम्रके हिसाबसे सामान्य सीमा रेखा अधिक पीछे की ओर गर्दन—सामने की ओर बढ़ी गुद्दीकी सीमा रेखा सामान्य।

चित्र ५—अग्र (सामनेका) सचय
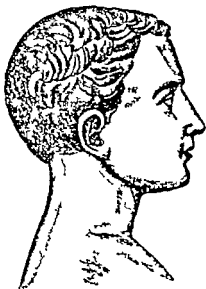
चित्र ६—स्वाभाविक आकृति

चित्र ७—अग्र-सचय

सिर—आकार सामान्य मस्तक—सिरे पर गंजा, चर्बी रहित आंखें—मन्द, नाक—सुन्दर, मुह—नीचेका होठ मोटा (सूजा हुआ), ठुड्डी बढ़ी हुई, चेहरा—सीमा रेखा कानसे बहुत पीछे, चेहरेका निचला अर्ध भाग बहुत भरा हुआ, गर्दन—सामने अधिक बढ़ी हुई, गुद्दीकी सीमा रेखा सामान्य।

सिर—आकार सामान्य मस्तक—चौरस, चर्बी रहित आंखें—सामान्य, नाक—सामान्य ओठ—अधिक मोटे, चेहरा—बायेंकी अपेक्षा दाहिनी ओर अधिक भरा और रवा, सीमा रेखा गायब, गर्दन—सामने बहुत बढ़ी हुई, थाडी बगलमें भी गुद्दीकी सीमा रेखा सामान्य ।

चित्र ८—अग्र और पार्श्व-सचय

समझनेके लिए हम हरेकका अलग-अलग विचार करेंगे।

१ अग्र—सामनेके—भागका सचय

(चित्र ५, ७, ३६ और ३७)

सामनेके सचयमे हमारा तात्पय है, जो पूरी तरह या खास तौरसे शरीरके आगेके हिस्सेसे सबधित हो। चित्र ५ इसका उदाहरण है। सही-सही तुलनाके लिए चित्र ६ की स्वाभाविक आकृतिका चित्र दिया गया है। पाठकको चाहिए कि दोनो चित्रोका अतर ध्यानपूवक मिलाकर देखें।

सामनेके सचयमे गदन सामनेकी ओर कुछ बडी (चित्र ७) हो जाती है। चेहरा भी अधिक बडा और भारी हो जाता ह। मुह प्राय लबा हो जाता है, क्योकि सारा दूषित द्रव्य वही आकर जमा होता है। चेहरेको गदनसे अलग करनेवाली रेखा एक विशेषता रखती है। सामनेके सचयम यह रेखा साधारणकी अपेक्षा प्राय पीछेकी ओर हटी हुइ होती है (चित्र ७ और ८)। यदि सामनेका सचय पूरा-पूरा व्यक्त होता है तो चेहरा बहुत फूल जाता है और माथेपर चर्बीदार गद्दी बन जाती ह। पर पीछेके सचयमे भी हम यह गद्दी पाते ह। इसलिए यह कोइ विशेष चिह्न नही ह। इससे केवल यह प्रकट होता है कि सचय मस्तिष्कके भीतरतक पहुच गया है।

बहुतोमे गदनपर पिंड बन जाते ह (चित्र १० और ३८)। इससे प्रकट होता ह कि सचय भयकर दशामे है। दूषित पदार्थके सूख जानेपर तो मास-पेशिया क्षीण होने लगती ह। यह भी हो सकता है कि सीमा निर्देश-रेखा (Demarcation line) जबडेके पास फिर स्वाभाविक रूपम आ जाय। फिर भी गदन

चित्र १२—अग्र और पार्श्व-संचय

सिर—लगभग सामान्य, मस्तक—सामान्य आंखें—सामान्य, नाक—सामान्य, मुंह—सामान्य, चेहरा—सीमा रेखा सामान्य, गर्दन—बहुत बड़ी, फूली हुई और सख्त, संचय सिर्फ गर्दन तक पहुंच पाया है जिससे घेघा हो गया है सिर संचयसे बिल्कुल मुक्त है।

(चित्र १२ वाली स्त्रीकी लडकी) सिर—जरा - सा बडा, मस्तक— कुछ चर्बीसे भरा, आंखें— दबी नाक—सामान्य, मुह—कुछ खुला, चेहरा— सीमा रेखा सामान्य गदन— फूली हुई, घेघा मिश्र सचय माताकी भाति कुछ दाप सिरमें प्रवश कर चुका ह ।

चित्र १३—अग्र और पाश्व-सचय

चित्र १४—स्वाभाविक आकृति

परके पिंड और त्वचाकी विवर्णता हमें यह बतलानेको काफी है कि वहां दोष-सचय बड़ी मात्रामे है।

सामनेके सचयकी दशामें त्वचाका रग पीला या अतिरिक्त सुर्ख होता है। और, अधिक सचयवाले हिस्सोंमें बड़ा तनाव रहता है। साथ ही, चमडेपर एक चमक-सी रहती है।

सिरकी परिचालन-क्षमता भी एक महत्त्वपूर्ण चिह्न है। सामनेके सचयमें सिरको सरलतासे पीछे नही किया जा सकता। ऐसा करनेका यत्न करनेपर गर्दनमें बड़ा खिंचाव प्रतीत होगा (चित्र ३८)। ऐसी स्थितिमें बड़े और छोटे पिंड दिखाई देंगे, जो यो नही दिखाई देते।

इस प्रकार सारा चेहरा समान रूपसे अथवा कुछ विशेष भाग इस सचयसे प्रभावित हो सकते है। जब-तब सचय केवल एकतरफा होता है। उस दशामें चेहरा एक ओरसे दूसरी ओरकी अपेक्षा भरा अथवा लंबा लगता है (चित्र ८)।

रोगकी विशिष्टता सचयके स्वरूपपर निर्भर करती है। शरीरके अग्रभागमें सचय होनेपर दोष पेटसे सिरतक और नीचे पांवोतक फैलता है। हमारी अधिकांश हड्डियां शरीरके अग्रभागमें ही है। इसलिए उन सबपर दोषका असर पड़ता है। अत अग्रभाग के सचयमें कोई भी तीव्र रोग होनेकी सभावना रहती है, जैसे, खसरा, सुर्ख बुखार, डिप्थीरिया, फेफड़ोकी सूजन इत्यादि। इन बीमारोके शरीरके सामनेके हिस्से अधिक पीड़ित होगे। बच्चोकी रुग्ण दशामें हम इसे स्पष्ट देख सकते है कि सामनेके हिस्सेमें फुन्सियां—अलाइ (अम्हौरी) निकलती है।

बहुत-से तथाकथित जीर्ण रोग भी सामनेके सचयसे होते हैं, विशेषत गले और गर्दनके। कभी-कभी मुख-सबधी रोगका

कारण भी सामनेका सचय होता है। आरभिक दशामे प्राय सिफ ठुड्डी प्रभावित होती है। सामनेके सचयमे दात नष्ट होते ह। विशेपत पहले नीचेकी पक्तिके होते ह। (चित्र ५ और ७ में नीचेके दात बहुत कच्ची उम्रमे क्षय हो गये ह।) नाडियो और आखोके रोग भी जब-तब हाते है। सचयके सिरके सर्वोच्च भागम पहुच जानेपर तो सिर गजा होने लगता ह। विशेपत सामनेके हिस्सेके बाल गिरने लगते ह।

केवल सामनेके सचयमे मानसिक विकृति होना असभव है।

सामने सचयके बावजूद मार्मिक अवयव प्राय स्वस्थ रहते है, क्याकि दोप-सचय प्राय गालोम और माथेपर होता है। उस दशामे उन हिस्सोम रोग होता है, विशेपकर सिर-दद होता ह और गालोपर फुडिया (मुहामे) निकलती ह। विशेपत, रोगीका ऋतु-परिवतन—तापकी कमीबेशी सताती ह।

कभी-कभी दोप-सचय बहुत धीरे बढता ह। उस दशाम व्यक्ति अधिक कष्ट अनुभव किये बिना उपयुक्त रोगोको भोगता रह सकता ह। पर आगे चलकर शरीरके उस हिस्सम, जिसमें पहले अधिक सचय नही था, यकायक विकार पैदा हो जाता ह।

सामनेके सचयका दूर करना अपेक्षाकृत सहज होता ह। इसके कारण उत्पन्न हुए रोग साधारणत उतने खतरनाक नही होते। सामनेके सचयमे सबध रखनवाली बच्चोंकी बीमारिया और अय ज्वर-सबधी रोग, 'सौम्य रोग' गिने जाते ह। जल-चिकित्सा द्वारा सामनेका सचय कुछ ही हफ्ताम दूर किया जा सकता है। बहुतोको इस बातपर आश्चय होता है कि क्यो एक रोगी जल चिकित्सा विधिसे इतनी शीघ्रतासे अच्छा हो जाता है और दूसरा धीरे-धीरे क्यो।

चित्र १७—वाम पार्श्व-सचय

आकृति—एकतरफी, बायां भाग दाहिने की अपेक्षा चौड़ा, सिर—आकृति सामान्य शरीरके मध्य भागमें नहीं है मस्तक—सामान्य, नाक—सामान्य, आंख—सामान्य, मुह—सामान्य, चेहरा—सामा रेखा सामान्य, गर्दन—बाईं ओर अधिक बढ़ी हुई कंध—बांया दाहिनेसे अधिक चौडा, शरीर—दाहिनी ओरसे बांया भाग विस्तृत बाहें आपसकी सीमा रेखा गायब पेड़ू—उभरा हुआ, बाईं ओरका सचय प्रकट कर रहा है पैर—दाहिनेसे बांया मोटा।

चित्र १८—बगल और सामनेका स्पष्ट सचय
सिर—कुछ अधिक बडा मस्तक—चर्बी भरा, आखें—दबी नाक—सामान्य, मुह—विकृत चेहरा—सीमा रेखा अस्पष्ट ठडडी—परिवर्धित, गर्दन—लगभग गायब मोटी रेखा और दाहिनी ओर मस्सा।

सिर— बहुत बडा मस्तक—चर्बीसे भरा आखें—दबी, नाक—कुछ अधिक बडी, मुह—खुला, चेहरा— सीमा रेखा सामान्य, गर्दन—शरीरकी भाति ही मोटी पिंडा वाली।

चित्र १९—अग्र और पार्श्व-सचय

सिर—कुछ अधिक बड़ा, मस्तक—चर्बीसे भरा, आँखें—मंद दबी हुई, नाक—सामने बहुत मोटी, मुह खुला, पर कुछ दिखाई नही देता, चेहरा—सीमा रेखा गायब, गर्दन—गुद्दी वापस भरी, सीमा रेखा गायब सिर दाहिने या बायें किसी ओर नही घुमाया जा सकता, पीठ—बंधे गाल।

चित्र २०—पृष्ठ-संचय

चित्र २१—पृष्ठ-संचय

सिर—बहुत बड़ा सामने झुका मस्तक—चर्बीसे भरा, आँखें—कुछ निकली हुई (पर अच्छी तरह दिखाई नही देतीं), नाक—सामान्य मुह और ठुड्डी—कुछ बड़ी हुई चेहरा—सीमा रेखा गायब गर्दन—सिर जितनी ही बड़ी, गुद्दीकी सीमा रेखा गायब, पीठ—बंधे गाल।

चित्र २२—पृष्ठ और पार्श्व सचय
सिर—बहुत बडा विशेषत पीछेकी ओर, मस्तक—चर्बीसे भरा बहुत चौडा, आंखें—सामान्य नाक—सामान्य मुह—सामान्य चेहरा—सीमा रेखा सामान्य गर्दन—बहुत मोटी, गुद्दीकी सीमा रेखा गायब है बगलका हिसाब विचित्र रूपसे बडा।

सिर—लगभग सामान्य, मस्तक—सामान्य आंखें—सामान्य नाक—सामान्य मुह—सामान्य, चेहरा—सीमा रेखा सामान्य गर्दन—कुछ अधिक मोटी, गुद्दीकी सीमा रेखा लगभग मिट-सी गई है।

चित्र २३—पृष्ठ-सचय
(आकृति २२ का युवावस्थाका चित्र)

सिर—आकृति सामान्य पर पीछेकी ओर अधिक बड़ा, मस्तक—सामान्य, आखें—सामान्य नाक—मूर्तिमें टूटा मिला, मुह— सामान्य, चेहरा—सीमा रेखा सामान्य, गर्दन—अधिक मोटी, गद्दीकी सीमा रेखा गायब ।

चित्र २४—पृष्ठ-सचय

सिर—अधिक बड़ा विशेषत पिछला हिस्सा, मस्तक—कुछ चर्बीसे भरा, आंखें—सामान्य मुह—सामान्य, चेहरा—सीमा रेखा सामान्य गर्दन—अधिक मोटी, गुद्दीकी सीमा रेखा गायब ।

चित्र २५—पृष्ठ और पार्श्व-सचय
(प्राचीन रोमन सिर)

होनी है। सचयकी दिशाके दातामें दद होने लगता ह। दात क्षय होने लगते है। पाश्व और सामनेके सचयके मिल जानेपर प्राय वहरापन आ जाता है। ऐसी दशाओम कानोकी ओर वढती हुइ सूजन अक्सर दिखाइ देती हैं। आखोपर भी शीघ्र प्रभाव पडता है, भूरा या काला मोतियाविन्द हो जाता है, जो स्वभावत सचय-ग्रस्त पाश्वकी ओर पहले होगा।

यदि सिरका आधा हिस्सा पूणरुपसे सचयग्रस्त हो तो परिणाम होगा आधा सीसी, यानी सिरके सिफ एक भागमें दद। ऐसा सिर-दद बिना किसी विशेष परिवतनके वर्षोतक विना किसी अधिक हानिके चलता रह सकता है, यहातक कि वहा सचय इतना वढ जाता ह कि फिर उस द्रव्यको अन्यत्र जानेको मजबूर होना पडता है।

मेरी एक परिचित स्त्री पद्रह साल अधकपारीके ददसे पीडित रही। डाक्टरोकी दवा-दारूसे उसे कोइ राहत न मिली। कौटुबिक डाक्टर उसे सिफ तसल्ली दिलाता रहा कि समय पाकर यह अपने-आप चला जायगा। हुआ भी यही कि पद्रह सालके बाद अध-कपारी तो चली गइ पर साथ-साथ अधनाने आ घेरा। उसकी आखोकी रोशनी जाती रही। किसीने यह खयाल तक नही किया कि उस अधकपारी और अधेपनका भी कोइ सबध है। सिफ अफसोस करते रहे कि बेचारी एक तकलीफसे छुटकारा पाकर इस नइ विपत्तिम फस गइ। लेकिन मामला तो बिल्कुल साफ था। दोष-सचय आखाकी ओर वढ आया था। उसका मजबूत ढाचा इतने दिनो तक उसे एक जगह रोके रहा था।

वाईं ओरका सचय प्राय त्वचाकी सक्रियताको मद कर देता है। इसलिए दाहिनी ओरकी अपेक्षा यह अधिक भयकर होता है। दाहिनी बगलके सचयमें पैरोका पसीजना आम बात ह।

सचय ग्रस्त दपती निरपवाद रूपसे सतान पदा नही कर सक्त ह। यदि स्त्री-पुरुपके जोडेमें-से केवल एकके पृष्ठ-सचय हो तो सतान हो सकती है। लेकिन वह कमजोर और अल्पायु होगी। पष्ठ-सचय-ग्रस्त स्त्रियोको गर्भपातका खतरा रहता है, या अकाल प्रसव का। यदि सतान हो गइ तो माके पास पिलानेका दूध नही होता।

पष्ठ सचय और उसके दुष्परिणाम यदि किसी जातिम आम हो जाय तो मानना पडेगा कि उस जातिकी उतरती घडी आ गई है और उसका पतन सनिकट ह। यह एक मजेदार और गौर तलब बात है कि पुराने पर्शियन (चित्र २४) और रोमनोकी (चित्र २५) शरीरके ऊपरी भागकी (bust) जो मर्तिया मिलती ह, उनम पृष्ठ-सचय दिखाइ देता ह। इस प्रकार मुखाकृति-विज्ञानके द्वारा हम जान सकते है कि सभ्यता और सपत्तिम उन्नत होनेपर भी उन जातियोका पतन क्यो हुआ ?

पष्ठ-सचय-ग्रस्त व्यक्तियोका बौद्धिक स्तर नीचा होता है। वे कूट राजनीति-सबधी कार्योके लिए कभी उपयुक्त नही होते। उदाहरणार्थ चित्र ६ का व्यक्ति निस्सदेह चित्र २० और २१ वालोकी अपेक्षा मानसिक—बौद्धिक रूपसे अधिक उन्नत है, चाहे उसकी साधारण शिक्षा कम ही क्या न रही हो।

पृष्ठ-सचय गरीबोकी अपेक्षा अमीरोमें अधिक पाया जाता है। कारण, अमीर ही भोजनकी मर्यादाका अधिकतर उल्लघन करते ह।

पष्ठ-सचय-ग्रस्त हर व्यक्तिका कर्तव्य ह कि वह शीघ्र अपने नीरोग होनेका उपाय करे, क्योकि उम्र बढनेके साथ-साथ रोग का अच्छा होना भी उतना ही कठिन होता जायगा। पृष्ठ-सचय-

की सबमे बडी बुराइ यह है कि पीडित व्यक्ति शनै -शनै नीरोग होनेकी शक्ति खो देता है। दोषद्रव्यके नरम और सचल रहते उसका निकालना अपेक्षाकृत सहज होता ह। पर द्रव्यके कडा हो जानेपर वह स्थायी-सा बन जाता है। तब उसे दूर करनेमे बडे धीरज और कष्टका सामना करना पडता है। फिर भी कभी कभी तो निराशा ही हाथ लगती है।

४ मिश्रित सचय

(चित्र ८, १८, १९ और २६)

पूर्वोक्त कथनानुसार अकेला एक तरहका सचय बहुत कम ही पाया जाता है। प्राय दो या सब तरहके सचय एक साथ पाये जाते ह। बहुत बार तो सामने या बगलका सचय एक साथ (चित्र ८, १०, १८ और १९) और उसी प्रकार बगलका तथा पृष्ठ-सचय (चित्र २२ और २५) एक साथ और कभी-कभी अग्र और पृष्ठ-सचय भी एक साथ ही पाया जाता है।

स्वभावत उन व्यक्तियोकी अवस्था अत्यधिक भयकर होती है, जिनमें शरीरके विभिन्न भागोका सचय (चित्र २६, ३९, ४०) होता है। ऐसे व्यक्ति स्नायविक रोगोसे ग्रस्त, अशात, असतुष्ट और सनकी होते हैं। उन्हे कोइ उग्र राग होनेपर, और जिसकी उनके लिए विशेप सभावना रहती है, बराबर खतरा बना रहता है। शरीरके फूले और माससे लदे होनेके कारण उन्हें खूब स्वस्थ माना जाता ह, लेकिन उनकी अकस्मात् मृत्यु होनेपर लोग आश्चय करते ह और कहते हैं कि ऐसा मोटा-ताजा आदमी कैसे यकायक मर गया।

लेकिन ऐसे लोगोका शरीर जबतक फूला रहता है (चित्र २८)

सचय-ग्रस्त दपती निरपवाद रूपसे सतान पैदा नही कर मक्त ह। यदि स्त्री-पुरुपके जोडेमें-से केवल एकके पृष्ठ-सचय हो ता सतान हो सकती है। लेकिन वह कमजोर और अल्पायु होगी। पृष्ठ-सचय ग्रस्त स्त्रियोको गभपातका खतरा रहता है, या अकाल प्रसव का। यदि सतान हो गइ तो माके पास पिलानेको दूध नही होता।

पृष्ठ सचय और उसके दुष्परिणाम यदि किसी जातिम आम हो जाय तो मानना पडेगा कि उस जातिकी उतरती घडी आ गइ है आर उसका पतन सनिकट ह। यह एक मजेदार और गौर-तलब बात है कि पुराने पर्शियन (चित्र २४) और रोमनोकी (चित्र २५) शरीरके ऊपरी भागकी (*bust*) जो मूर्तिया मिलती ह, उनमें पृष्ठ-सचय दिखाइ देता है। इस प्रकार मुखाकृति-विज्ञानके द्वारा हम जान सकते है कि सभ्यता और सपत्तिम उन्नत होनेपर भी उन जातियोका पतन क्यो हुआ ?

पृष्ठ-सचय ग्रस्त व्यक्तियोका बौद्धिक स्तर नीचा होता ह। वे कूट राजनीति-सबधी कार्योके लिए कभी उपयुक्त नही होते। उदाहरणाथ चित्र ६ का व्यक्ति निस्सदेह चित्र २० और २१ वालोकी अपेक्षा मानसिक—बौद्धिक रूपमे अधिक उन्नत है, चाहे उसकी साधारण शिक्षा कम ही क्यो न रही हो।

पृष्ठ-सचय गरीबोकी अपेक्षा अमीरोमें अधिक पाया जाता है। कारण, अमीर ही भोजनकी मर्यादाका अधिकतर उल्लघन करते है।

पृष्ठ-सचय-ग्रस्त हर व्यक्तिका कतव्य है कि वह शीघ्र अपने नीराग होनेका उपाय करे, क्याकि उम्र बढनेके साथ-साथ रोग का अच्छा हाना भी उतना ही कठिन होता जायगा। पृष्ठ-सचय-

की सबसे बडी बुराइ यह है कि पीडित व्यक्ति शनै -शनै नीरोग होनेकी शक्ति खो देता है। दोषद्रव्यके नरम और सचल रहते उसका निकालना अपेक्षाकृत सहज होता है। पर द्रव्यके कडा हो जानेपर वह स्थायी-सा बन जाता है। तब उसे दूर करनेमे बडे धीरज और कष्टका सामना करना पडता है। फिर भी कभी-कभी तो निराशा ही हाथ लगती है।

४ मिश्रित सचय

(चित्र ८, १८, १९ और २६)

पूर्वोक्त कथनानुसार अकेला एक तरहका सचय बहुत कम ही पाया जाता है। प्राय दो या सब तरहके सचय एक साथ पाये जाते है। बहुत बार तो सामने या बगलका सचय एक साथ (चित्र ८, १०, १८ और १९) और उसी प्रकार बगलका तथा पृष्ठ-सचय (चित्र २२ और २५) एक साथ और कभी-कभी अग्र और पृष्ठ-सचय भी एक साथ ही पाया जाता है।

स्वभावत उन व्यक्तियोकी अवस्था अत्यधिक भयकर होती है, जिनमे शरीरके विभिन्न भागोका सचय (चित्र २६, ३९, ४०) होता है। ऐसे व्यक्ति स्नायविक रोगोसे ग्रस्त, अशात, असतुष्ट और सनकी होते है। उन्हे कोइ उग्र रोग होनेपर, और जिसकी उनके लिए विशेष सभावना रहती है बराबर खतरा बना रहता है। शरीरके फूले और मासमे ल्दे होनेके कारण उन्हें खूब स्वस्थ माना जाता है, लेकिन उनकी अकस्मात् मृत्यु होनेपर लोग आश्चय करते है और कहते है कि ऐसा मोटा-ताजा आदमी कैसे यकायक मर गया।

लेकिन ऐसे लोगोका शरीर जबतक फूला रहता है (चित्र २८)

सिर—असामान्य, ऊपर अधिक चौडा मस्तक—दबा, आंखें—दबी, नाक—सामान्य, मुह—सामान्य चेहरा—पीला, गर्दन—सख्त कुछ अधिक मोटी।

चित्र ३२—व्यापक सचय
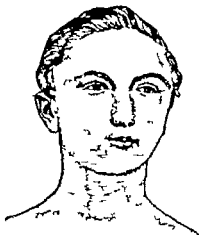
सिर—बहुत बडा, ऊपर बहुत चौडा, नीचे बहुत तग, मस्तक—दबा, आंखें—दबा, नाक—सामान्य, मुह—सामान्य, चेहरा—पीला विकृत, गर्दन—बहुत मोटी, सख्त।

चित्र ३३—व्यापक सचय
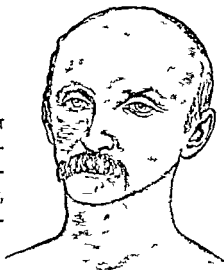
चित्र ३४—व्यापक सचय

आकृति—असामान्य अत्यधिक ढालू कंधे, सिर—छोटा, पिछला हिस्सा अधिक ऊंचा मस्तक—सामान्य आँखें—सामान्य नाक—सामान्य, मुह—सामान्य, चेहरा—सीमा रेखा सामान्य, गदन—अधिक मोटी गुद्दी पर सीमा-रेखा लुप्त ।

तवतक तो आराम होनेकी उम्मीद की जा सकती है। लेकिन इनके कृश और शुष्क होने लगनेपर तो ईश्वर ही मालिक होता ह। ऐसोको बहुत मदद नही पहुचाइ जा सकती। किसी भी रोगीका आराम होना, उसकी उम्र और जीवनी-शक्तिपर निभर करता ह। बहुतमे लोगोमें इस अवस्थामें भी दोषको बाहर निकाल फेकने-की काफी शक्ति होती है। पर जीवनी शक्तिकी कमी होनेपर तो लाभ होना कठिन ही होता है।

भीतरी अवयवोके रोग

मुखाकृति-विज्ञानका साधारणत डाक्टरीकी रोग-नामावली-से कोइ वास्ता नही है। हर रोगका नाम देनेसे इसे क्या मतलब है? यह सामा यत इस निदानमे समथ है कि कौन-सा भीतरी अवयव अधिक आक्रात हुआ ह। अब हम लक्षणो तथा उसके द्वारा किये गए अनुमानके आधारपर विचार करेगें। हमारे पाठकोको यह तो पता ही है कि किसी प्रकारका सचय होनेपर पाचनेन्द्रिया हमेशा प्रभावित होती है। बीमारी—विकारका आरभ यहीसे होता है और जिस हदतक वे दोप-व्याप्त होती ह, उतना ही उनकी काम करनेकी शक्ति छीजती है। सभव है, पीडित व्यक्तिको इसकी कोइ प्रतीति न हो, क्योकि विकारकी जीण दशा आतरिक अवयवोमे बहुत कम पीडा देती है। पाचनेन्द्रियोको अपना काम बे-मालूम तरह-से, यानी अपनी स्थितिका अनुभव कराये विना, पूरा करना चाहिए। ऐसी स्थिति तो उन्ही लोगाकी होती है, जो अपना अधिकाश समय खाली हवामे बिताते है। बहुसख्यक व्यक्ति तो पेट या आतोमे साधारण पीडाकी शिकायत करते ही मिलते ह। इसे वह अपना बडा सौभाग्य मानते ह कि उनके इन भागामें कोइ बडी पीडा नही होती।

लेकिन पूर्ण पाचन-क्षमता दोष-सचय-ग्रस्त मनुष्यमें कभी नही मिलती। स्वभावत यह उस दशामे तो बहुत ही खराब रहता है, जहा दूषित द्रव्य शुष्क हो गया है। इसके परिणामस्वरूप कब्ज अथवा अतिसार भी हो सकता ह। ये दोना दशाए आतरिक तापका परिणाम ह। आतोकी झिल्लियोके शुष्क हो जानेसे—नमी चली जानेके कारण—कब्ज हो जाता है। तब मल निकल नही पाता, गाठे पड जाती हैं। अतिसार आतोमें अदरक मलको बाहर फकनेकी काफी शक्ति रह जानेपर ही होता ह। उस दशाम मल पूरी तरह पचे बिना ही निकल जाता ह। दोनो ही दशाओमे खुराक पूरी तरह पचती नही ह और शरीरको उचित पोषण न मिलनेके साथ-साथ निरतर दोष-सचय भी होता रहता है। परिणाम होता ह रक्त-हीनता और दिन दिन सारे शरीरका क्षय। पोषक खुराक दिये जानेके बावजूद कमजोरी और कृशता बढती जाती है। इससे स्पष्ट हो जाता ह कि खुराककी अपेक्षा पाचन-क्षमताका कही अधिक महत्त्व ह। अत पहला कर्तव्य पाचनकी अव्यवस्थापर ध्यान देना है। सचय कैसा है, किधरका है, इसकी परवा नही। बाईं ओरके सचयमें यह समझा जाना चाहिए कि पाचनेन्द्रियोके ये वे हिस्से हैं, जो बाईं ओर पडते ह और जो अधिक प्रभावित हुए हैं। वहापर रुक-रुककर या लगातार कष्टकर अनुभूति और ददका अनुभव होगा। सचय दाहिनी ओर होनेपर कष्ट विशेषकर उधर मालूम होगा। पृष्ठ-सचयमें आतोके पिछले हिस्सेमें कष्ट अनुभव होता ह। जैसा कि पहले कहा गया ह, साधारणत उस व्यक्तिको कब्ज़ीरका कष्ट होता है। अग्र-सचयमें दूसरे प्रकारके सचयोकी अपेक्षा पाचन-यत्र कम प्रभावित होते ह। कष्ट तो उतना ही होता ह,

लेकिन पाचनमें गडबडी उतनी नही होती ह । उस दशामे किसी आरोग्यकारक उभार या मेरे स्नानो या उचित रहन-महन द्वारा आराम होना आसान होता है।

पाचनेन्द्रियोंमें एक अवयव यकृत है जो दाहिनी ओर है और जो इस ओरके सचयमे लगभग हमेशा ही प्रभावित होता ह । उस दशामे शरीरका रग पीला पड जाता है, क्योकि यकृत (लीवर) रक्तसे पित्तको अलग करनेमें असमर्थ हो जाता है। दाहिनी ओरका सचय और उसीके साथ त्वचाका पीला रग सामान्यत यकृतकी खराबीके चिह्न ह । लीवरकी खराबी और सामान्यत दाहिनी ओरके सचयका एक चिह्न है खूब पसीना आना। ऐसे सचयवाले सब व्यक्तियोको तत्काल पसीना आता है, जिससे उन्हे बहुत लाभ होता है। प्राय उन्हे पैर पसीजनेका कष्ट रहता ह । भले ही यह दु खदायी लगता हो, पर इन लोगोके लिए यह तब-तक बहुत ही लाभदायक होता है, जबतक कि उसके द्वारा दोप बाहर निकलता रहता है। सारा दोप निकल चुकनेपर तो पैरोका पसीजना अपने-आप बद हो जाता ह । उस दशामे इसका बद होना बुरा नही समझा जाना चाहिए। लेकिन यदि यह कृत्रिम रूपसे दवाओ द्वारा रोका जाय तो परिणाम सकटजनक हो सकता ह, क्याकि उस स्थितिमे पसीनेसे निकलनेवाला दोप अदर इकट्ठा हो जाता है और सभव है वह किसी मर्म स्थानमें एकत्र हो जाय। इसी प्रकार मूत्रपिड—गुर्दे भी पाचनेन्द्रियोंमे सबध रखते है, और शरीरमे किसी भी प्रकारका दोप-सचय होनेपर इनके रुग्ण होनेकी सभावना रहती है। मूत्रको देखकर इनकी दशा तुरत जानी जा सकती है। इनकी अवस्था पृष्ठ और वाम पार्श्वके सचयमे नाजुक हो जाती ह, क्योकि उस दशामे पसीना कम आता है।

लेकिन पूर्ण पाचन-क्षमता दोष-सचय-ग्रस्त मनुष्यमे कभी नही मिलती। स्वभावत यह उस दशामे तो बहुत ही खराब रहती है, जहा दूषित द्रव्य शुष्क हो गया है। इसके परिणामस्वरूप कब्ज अथवा अतिसार भी हो सकता है। ये दोनो दशाए आतरिक तापका परिणाम ह। आतोकी झिल्लियोके शुष्क हो जानेसे—नमी चली जानेके कारण—कब्ज हो जाता है। तब मल निकल नही पाता, गाठें पड जाती ह। अतिसार आतोमें अन्दरसे मलको बाहर फेंकनेकी काफी शक्ति रह जानेपर ही होता है। उस दशामे मल पूरी तरह पचे विना ही निकल जाता ह। दोनो ही दशाओमे खुराक पूरी तरह पचती नही है और शरीरको उचित पोषण न मिलनेके साथ-साथ निरतर दोष-सचय भी होता रहता है। परिणाम होता ह रक्त-हीनता और दिन दिन मारे शरीरका क्षय। पोषक खुराक दिये जानेके वावजूद कमजोरी और कृशता वढती जाती है। इससे स्पष्ट हो जाता ह कि खुराककी अपेक्षा पाचन-क्षमताका कही अधिक महत्त्व ह। अत पहला कर्तव्य पाचनकी अव्यवस्थापर ध्यान देना है। सचय कैसा है, किधरका है, इसकी परवा नही। बाई ओरके सचयमे यह समझा जाना चाहिए कि पाचनेन्द्रियाके ये वे हिस्से ह, जो बाइ ओर पडते है और जो अधिक प्रभावित हुए हैं। वहापर रुक रुककर या लगातार कष्टकर अनुभूति और दर्दका अनुभव होगा। सचय दाहिनी ओर होनेपर कष्ट विशेषकर उधर मालूम होगा। पृष्ठ-सचयमें आताके पिछले हिस्सेमे कष्ट अनुभव होता ह। जसा कि पहले कहा गया है, साधारणत उस व्यक्तिको बवासीरका कष्ट होना है। अग्र-सचयमे दूसरे प्रकारके सचयोकी अपेक्षा पाचन-यत्र कम प्रभावित होते है। कष्ट तो उतना ही होता ह,

लेकिन पाचनमें गड़बड़ी उतनी नहीं होती है। उस दशामें किसी आरोग्यकारक उभार या मेरे स्नानों या उचित रहन-सहन द्वारा आराम होना आसान होता है।

पाचनेन्द्रियोंमें एक अवयव यकृत है, जो दाहिनी ओर है और जो इस ओरके संचयमें लगभग हमेशा ही प्रभावित होता है। उस दशामें शरीरका रंग पीला पड़ जाता है, क्योंकि यकृत (लीवर) रक्तसे पित्तको अलग करनेमें असमर्थ हो जाता है। दाहिनी ओरका संचय और उसीके साथ त्वचाका पीला रंग सामान्यतः यकृतकी खराबीके चिह्न हैं। लीवरकी खराबी और सामान्यतः दाहिनी ओरके संचयका एक चिह्न है खूब पसीना आना। ऐसे संचयवाले सब व्यक्तियोंको तत्काल पसीना आता है, जिससे उन्हें बहुत लाभ होता है। प्रायः उन्हें पैर पसीजनेका कष्ट रहता है। भले ही यह दुःखदायी लगता हो, पर इन लोगोंके लिए यह तब-तक बहुत ही लाभदायक होता है, जबतक कि उसके द्वारा दोष बाहर निकलता रहता है। सारा दोष निकल चुकनेपर तो पैरोंका पसीजना अपने-आप बंद हो जाता है। उस दशामें इसका बंद होना बुरा नहीं समझा जाना चाहिए। लेकिन यदि यह कृत्रिम रूपसे दवाओं द्वारा रोका जाय तो परिणाम संकटजनक हो सकता है, क्योंकि उस स्थितिमें पसीनेसे निकलनेवाला दोष अंदर इकट्ठा हो जाता है और संभव है वह किसी मर्म स्थानमें एकत्र हो जाय। इसी प्रकार मूत्रपिंड—गुर्दे भी पाचनेन्द्रियोंसे संबंध रखते हैं, और शरीरमें किसी भी प्रकारका दोष-संचय होनेपर इनके रुग्ण होनेकी संभावना रहती है। मूत्रको देखकर इनकी दशा तुरंत जानी जा सकती है। इनकी अवस्था पृष्ठ और वाम पार्श्वके संचयमें नाजुक हो जाती है, क्योंकि उस दशामें पसीना कम आता है।

तब आखोके नीचे चमडा सिकुडकर थैलीसी बन जाती है, जो-गुर्देकी बीमारीका निश्चित चिह्न है।

पाचनेन्द्रियमें बहुत अधिक दोप-सचय होनेपर जननेन्द्रिय (खासकर स्त्रियो की) प्रभावित होती है, पर शनै-शनै और उसी दशामें, जबकि सचय अत्यधिक होता है। जान पडता है कि कुदरत की मशा है कि सृष्टिक्रम शीघ्र प्रभावित न हो। स्त्रियामें जननेन्द्रिय-सबधी रोग दो प्रकारके हो सकते हैं। एक तो आतामें अत्यधिक दोप-सचय हो जानेमे, जिससे गर्भाशय दबाव पाकर हट जाता है, और जिसे गर्भाशयका सरकना कहा जाता है, दूसरे जननेन्द्रियोके स्वय दोपसे पूरित हो जानेसे। यह दूसरी स्थिति केवल पष्ठ-सचयमें पाइ जाती है। स्त्रियोम इस प्रकारका सचय बध्यत्वका, गर्भ-कालमें कष्टका और प्रसवमे कठिनाइका कारण होता है। सचयकी मात्राके अनुसार दूध भी कम उतरता है या बिल्कुल बद हो सकता है। पूर्व कथनानुसार पृष्ठ-सचय सतति होनेमें बाधक होता है।

यदि यह सचय शरीरके ऊपरी या नीचेके हिस्सेमे बढता है और पसीने द्वारा निकल नही जाता तो वात-रोगकी आशका रहती है। विशेषत यह बाइ दिशाके सचयमें होता है, क्योकि उस दशामे पसीना पूरा नही आता। इस तरह बाइ दिशाके सचयम गठियाका खटका रहता है। लेकिन यह सचय अधिक मात्रामें होनेपर ही होता है, क्योकि सारा शरीर छोर तक दोपसे भर जाने तक ये कष्टकर लक्षण प्रकट नही होते। वात-पीडा प्राय यकायक ताप गिर जानेसे होती है। ठड आकस्मिक सकोचन पैदा करती है और उस दशाम दोप पीछेकी ओर वापस ढकेला जाता है और जोडोपर आकर जमा हो जाता है। इससे दद बढता

है । ऐसा वातका दद हमेशा जोडोके आगेकी ओर होता है, पीछे-की ओर कभी नही होता। यदि स्थानीय भाप-स्नानसे दर्दके स्थानके छिद्र खोल दिये जाय तो जमा हुआ दोप पिघल जायगा और कुछ दोप निकल जानेसे दद भी जाता रहेगा।

दोप निकल न पानेकी दशामें वह सख्त हो जाता है और यही गठिया हो जाता है। यह अच्छे न हुए वात-रोगका परिणाम है। वात-रोगको शुष्क गर्मी देकर हटानेकी कोशिशके परिणाम-स्वरूप भी यह हो जाता है। वात-रोगकी अपेक्षा गठियाका आराम होना अधिक कठिन होता है। वातकी भाति ही गठिया भी वाईं दशाके सचयका परिणाम ह। वाईं दिशाका सञ्चय देखकर हम सहज म वात और गठिया की भविष्यवाणी कर सकते ह। पृष्ठ-सचय हुआ और गुर्दे भी रोगी हुए तो हालत और भी खराव होती ह, क्याकि उस हाल्तम गुर्दे अपना काम यथावत् नही कर पाते। इसके कारण दोपकी वढी हुइ मात्रा, जो वाहर निकल जानी चाहिए, अदर रह जाती है। वाइ दिशाके सचयम हृदय भी आक्रात होता है, विशेपकर जहा मामनेका सचय भी शामिल रहता है।

फेफडेके रोगोकी गिनती अति भयकर रोगोम की जाती ह। रोगीके फेफडोके आक्रात न होनेका अनुभव करने और डाक्टरके फुप्फुस-सवधी रोगका निदान करनेतक उसका शरीर बुरी तरह रोगाक्रात हो चुका होता है।

मुखाकृति विज्ञानकी सहायतामे तो रोगका निदान वहुत पहले हो सकता ह और समय पर यदि उचित उपचार किया जाय तो यह रोग भी, रोगोके अन्य रूपोकी भाति सहजमें आराम किया जा सकता है। पूर्व-कथनानुसार फेफडे कभी अकेले आक्रात

नहीं होते । सारा शरीर रोगसे लद जानेपर ही बादको फेफडा पर असर पहुचता है । अस्वच्छ हवा भी, जैसाकि पहले कहा जा चुका है, फेफडाको आक्रात नही कर सकती, जबतक कि शरीरके भीतरी भागमें दोष जमा न हो जाय। सभवत, फुप्फुस—फेफडो सबधी रोग सामान्यत अन्य रोगोके, खासकर ज्वरको दवा द्वारा दबाये जानेके परिणामस्वरूप पैदा होते हैं । डाक्टरोंके बुखारकी प्रकृति न पहचानने और उपचारके ये गलत तरीके चलते रहने तक कुफल स्वरूप फेफडे-सबधी बीमारिया फैलती ही रहेंगी । दोष ऊपरसे आकर फेफडामे जमा होता है । सिर और कधोपर विशेष सचय हो जाने पर वहासे वह नीचे उतर आता है । कभी-कभी सिर मुक्त रहता है और सचय सीधे कधोसे और गलेमे आरभ होता है (चित्र ३८) । इस प्रकार दोष पहले नीचेसे ऊपरकी ओर जाता है उसके बाद फिर भीतरी अवयवोमे ऊपरसे नीचे की ओर। जब दोष नीचे आता है तो फेफडोके शीर्ष भाग प्राय पहले आक्रात होते है। अक्सर यह देखा जाता है कि जिन्हें क्षय होता है, वह पूर्ण युवा और तगडे होते है । क्षय होनेसे पहले कोई यह देख सकता था कि उस समय भी दबाव ऊपरकी ओर है और पेट में पिड बन रहे है । चेहरा सुख चमकदार है और शनै-शनै चौरस शक्ल (चित्र ३७, ३८ और ३९) ले रहा है। आगे चलकर इन व्यक्तियो का मुहको बद रखना मुश्किल हो जाता है, लेकिन धीरे धीरे ओठोके अलग-अलग रहनेका अतर बढता जाता है । इस स्थितिमे नाक भीतरसे सूख जाती है और नाक और पुप्फुस जीर्ण श्लेष्मासे भर जाते है । नाकका भीतरी भाग काला भी पडने लगता है, जिससे रोगकी बढी हुई दशाका अन्दाज होता है । शरीर तगडा रहने तक तो नाक फूलती जाती है फिर यह पतली पडती जाती

सिर — सामान्य, गर्दन — सामने सामान्य, पीछे कुछ अधिक मोटी पीठ— पर एक दोषकी भरी हुई थैली इसी वजहसे सिरमें दोष-सचय हो पाया है।
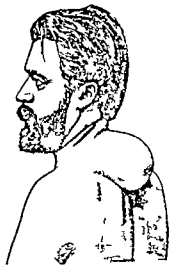
चित्र ३५—पृष्ठ-सचय

चित्र ३६—अग्र और पार्श्व-सचय (गण्डमालासे पीड़ित लडका) सिर—बहुत बडा मस्तक—चर्बीसे भरा, आँखें—दबी, नाक—बहुत मोटी, मुह—खुला चेहरा—लगभग चौरस, सीमा रेखा लुप्त गर्दन—बहुत छोटी और मोटी।

चित्र ३७—अग्र और पार्श्व-सचय (गण्डमाली लडका) सिर—बहुत बडा मस्तक—चर्बीसे भरा, आँखें—सामान्य नाक—अधिक मोटी, मुह—खुला, चेहरा—लगभग चौरस, सीमा रेखा लुप्त, गर्दन—बहुत छोटी और मोटी।

मिलती ह, क्योकि शरीरसे काफी दोप मवादके रूपमें निकल जाता है। लेकिन अल्प जीवनी-शक्तिवाले लोगोमें दोप सख्त होकर गाठाकी शक्ल ले लेता है, और यही फेफडेकी क्षय-ग्रथिया कहलाती ह। ये भी एक प्रकार के व्रण ही हैं, जा पक नहीं पाते ह। वे वही उठते ह, जहा जीवनीशक्ति कमजोर होती है।

ऐसी गाठोमें कोइ दर्द नही होता। इससे साधारणत रोगी-को अपनी भयकर दशाका अदाज नही हो पाता। इनमें शरीरकी शक्ति तो क्षय होती जान पडती है, लेकिन दद न होनेके कारण कोई यह नही सोच पाता कि वह मौतकी ओर कितनी तजीसे बढ रहा ह।

अन्य सूजन भी इसी तरह पैदा होती ह, नाम उनका बवासीर, ट्यूमर, कसरकी गाठें आदि चाहे जो रख दिया जाय। प्लेगकी वाघी और फोडे भी उसी तरह पैदा होते ह। इनमें भी उसी प्रकार शरीर स्वय अपनी सफाइ करनेकी कोशिश करता ह, पर जीवनी-शक्तिकी अल्पता उसे सफल नही होने देती और उसीके परिणाम-स्वरूप गाठ होती है।

भयकर रोग कुष्ठका आरभ भी सिरोपर गाठे—गिल्टिया बननेके रूपमें ही होता है। ये गिल्टिया पहले वही बनती हैं जहां पसीना निकलना बद हो जाता है।

गिल्टियोका होना, चाहे वे किसी प्रकारकी हो, हमेशा इस बातका लक्षण ह कि शरीरकी दशा भीतरसे बिलकुल अव्यवस्थित है और जीवनीशक्ति घट गइ ह, जिससे शरीर थाडा या पूरा फोड और घाव पदा करनेमे असमर्थ हो गया ह।

सामान्यत भयकर पष्ठ-सचयमे उपयुक्त चिह्न पाये जाते ह। मामूली सामनेके सचयमें जीवनी-शक्ति उतनी बुरी तरह प्रभावित

नही होती।

जीवनी-शक्तिको बढा पानेपर गिल्टिया फोडोका रूप ले लेंगी और स्वास्थ्य सुधर जायगा।

एक व्यक्ति वर्षोसे आखका कष्ट भोगते भोगते लगभग अधा हो चला था। उसके सिरमे बहुत-सी गाठे थी, जो साल-बसाल बढ रही थी। मेरे उपचारसे उसकी जीवनी शक्ति इतनी बढी कि दोनो गालोपर बडे-बडे फोडे बने और उनमसे काफी मवाद निकला। गाठे गायब होगई, साथ-साथ उसकी आखोकी दशा सुधर चली और कुछ ही दिनोम वह भलीभाति देखने लगा।

एक २० वर्षीय युवकके हाथामें और चेहरेपर काफी तादादम मस्से हो गये थे। गरमीके मौसममें उसे खुली हवामे रहनेका मौका मिल जानेसे उसकी जीवनीशक्ति जागी और बिना किसी उपचारके उसे उभार आया। उसके एक बाजूपर बडा-सा फोडा बना और वह कइ हफ्तो तक बहता रहा। उसको स्वय और उसके दोस्तोको यह देखकर बडा आश्चय हुआ कि इस बीच उसके हाथ और चेहरेके मस्से जाते रहे। इस मामलेमें शरीरने स्वय अपनी शक्तिसे काम लिया।

फेफडोके क्षयकी भाति ही अनेक प्रकारका कुष्ठ गरम मुल्कोमें बहुत साधारण है। यह रोग भी अति दोष-सचयका ही परिणाम ह, बहुत करके अन्य दूसरी बीमारियोका फल—खासकर ज्वर तथा गरमीका—जो दवाओ द्वारा दबाइ गइ है। उपदशको दबानेका जो साधारण डाक्टरी तरीका है, यानी पारेका इस्तेमाल—वहा चगा होनेकी सभावना कम रह जाती है। वह शरीरकी आराम करनेकी निजी शक्तिका बहुत कमजोर कर देता है।

अन्य रोगोकी भाति कुष्ठ भी ज्वरीय रोग है, क्योकि इसमें

चित्र ४२—कुष्ठी-समूह

शरीर गाठोको घुलाने और दोष-सचयको निकालनेकी कोशिश करता रहता ह । यदि यह घाव या फोडे पैदा करनेमे सक्षम हो जाता है तो गाठे जाती रहती है और त्वचा, जो पहले खुश्क और चमकीली थी, अब फिर सामान्यत नरम और उसके सूक्ष्म छिद्र मुक्त हो जाते है । शरीरमें घाव पदा करनेकी यथेष्ट जीवनी-शक्ति न होनेपर गाठे आकारमे बढ़ती जाती ह, या अतमे सूख जाती है और उसके कारण हड्डीमे घाव होकर हड्डी और अग सडने लगता है ।

चित्र ४१ असली फोटोमे लिये हुए कुष्ठियोके एक समूहका चित्र है । इनमेसे कुछके सब अग साबित ह, कितनाके हाथ पाव सड गये ह और कितने ही केवल अस्थि पजरमात्र हैं । ऐसे रोगियोका आराम होना प्राय असभव है । यह तो तभी तक सभव होता है कि जबतक शरीर सडना नही शुरू हुआ है, अथवा दोष खुश्क नही हुआ है । डाक्टर इस रोगको असाध्य मानते है । रोगकी प्रकृतिसे बिल्कुल अनजान होनेके कारण ही वे ऐसा मानते ह । कुष्ठम वे कोइ अस्थायी लाभ भी नही दिखा सक्ते, क्योकि इसम समूचा शरीर दोषाक्रात होता है—कोइ ऐसा भाग नही बचता कि जहा दोषको ढकेला जा सके । चिकित्सा विज्ञान कहलानेवाली पद्धति अपनी सारी ताकतका उपयोग करती है, कुष्ठियोको अपने कुटुबसे छिनवाकर दूसरे द्वीपको भेज देती है । लेकिन इस प्रकार कुछको हटा देनेपर भी कुष्ठ नही हटता । डाक्टर इसकी रोकथामके बारेमे कोइ उपाय नही कर पाते । कुष्ठका कारण कुछ कीटाणुओको मान लिया गया है, लेकिन शरीरके दोष-सचयका उन्हें कोई पता नही ।

मुखाकृति विज्ञानका साधारण विद्यार्थी भी आनेवाले खतरे-

भयकर सचय है। चेहरेकी पृथक्करण रेखा कानकी साधारण रेखासे बहुत पीछे है। कुछ पृष्ठ-सचय भी है। गदनपरकी पृथक्करण रेखा प्राय अपनी जगहपर है। सिरको सीधा पकड रखनेपर यह और स्पष्ट दिखाइ देता है। रोगीकी गदन ऊपर उठाकर देखनेपर तो एक सूजन साफ दिखाइ देती है, साथ-साथ गदनका खिचाव भी। गदनको दायें-बायें घुमानेसे पार्श्व-सचय भी प्रकट होता है और तनाव भी। आखोका रोग सामनेके सचयके कारण हुआ है। हम निश्चित रूपसे इस परिणामपर पहुचते है कि शरीरके सामनेके सारे हिस्सेमें दोष-सचय है और पेड़ू मुख्य रूपसे प्रभावित है। पार्श्व सचय इतना स्पष्ट नहीं है कि उन हिस्सोमें विशेष बेचैनी हो। आखोपर जो असर पडा है वह सिरमें सचय बढनेके कारण है। इस निदानसे हम रोगीको ढाढस बधा सकते हैं कि वह अपेक्षाकृत आसानीसे चगा हो सकता है। इसलिए कि उसका रोग सामनेके सचयका है।

इस मामलेमे हमें आखोका स्थानीय उपचार, जैसा कि किया जाता है, शुरू करनेकी जरूरत नही है। इसके बदले पेडूसे सचय निकालनेका उपाय करना चाहिए। इसके निकलनेके साथ-साथ आखोको भी फायदा होगा। इस लडकीके बाजूपर जो एक घाव है, उसका क्या कारण है? यह कृत्रिम घाव टीकेका परिणाम है। बच्चेका खून ट्यूबरक्यूलिनके इन्जेक्शना द्वारा विषाक्त कर दिया गया है। यह बात हमारी जाचसे पकडमें नहीं आ सकती थी। यह तो इसकी माताने हमें बतलाया। पर शरीरमे यह विष पहुचाये जानेके कारण इसके आरोग्य होनेमें देर लग सकती है।

इन सबके बावजूद कुछ ही हफ्तोमें इस लडकीकी

आखोमे रोशनी लौट आइ । सिरका सचय इस बीच बहुत-कुछ घट गया था ।

२ चित्र ३८ के लडकेको देखकर तो हम उसकी बीमारीको कम ही समझ पायगे । बहुत लोग तो वास्तवमे उसे स्वस्थ ही मानेगे। उसका ढाचा और वण रोगीका-सा नही लगता—यद्यपि उसके चेहरेपर युवावस्थाकी ताजगीका अभाव है, तथापि हम स्वस्थ शरीरको सामने रखकर तुलना करें तो हमे पता चलेगा कि उसके सिरका, सामनेका हिस्सा कुछ बडा है ।

हम ज़रा सूक्ष्मतासे देखें । इसमें मचय नही है। चेहरेकी पृथक्करण रेखा स्वाभाविक है । इसे देखकर कोइ भी कह सकता है कि सामनेका सचय नही है। फिर भी गौरसे देखनेपर हम पाते ह कि गरदनकी दाहिनी ओर मासपिंड है । रोगीके सिरको एक तरफ घुमानेपर यह स्पष्ट प्रकट होता है । यदि वह इसे पीछेकी ओर झुकाता है तो हम पाते ह कि सामने काफी खिचाव पडता है और शोथ भी ह । इस प्रकार हम देखते ह कि यहा सचय बाइ ओरका है और सामनेका भी । उसम दोपका ऊपरी दबाव है और भीतर उच्च ताप है । दोप कुछ-कुछ माथे तक पहुच गया है । कुछ हिस्सा गदनमे जमा हो गया है और ट्यूमर(गाठ) की शकल ले ली ह । हमे निश्चय है कि ये पिंड कमोवेश पेड़ूमे भी मिलगे—विशेपत बाई ओर ।

यह लडका जरूर हृदयकी धडकनसे पीडित होना चाहिए । इसे पसीने भी ठीक न आते हागे । फलस्वरूप उसकी पाचनक्रिया भी मद होगी, क्योकि पाचनका ठीक रहना पसीनोके ठीक निकलते रहनेपर निभर करता ह । यदि यह दोप बाई ओर ऊपर—सिरकी तरफ बढता गया तो परिणामस्वरूप इसे अधकपारी, कणशूल

पूर्ण बाहरी आकृतिसे हम मालूम कर सकते है कि उसका शरीर दोषसे भरा हुआ है। गौरसे देखनेपर पता चलता है कि बाईं ओर भयकर सचय है। सामनेका सचय बहुत कम है। पर पीठ काफी प्रभावित है। बाइ ओर कोइ सचय नही है।

इस प्रकारका प्रकट सचय बतलाता है कि पेडू का सचय बहुत बढ गया है। वहा काफी फुलावट होगी, विशेषत बाईं ओर।

यह रोगी निस्सन्देह हृद्रोगसे पीडित है। गठियाकी ओर उसका झुकाव है और सचयाधिक्यके कारण उसे दाहिनी ओरके लकवेका डर है।

इतने अधिक सचयकी स्थितिमें पूरा आराम होना तो कभी-कभी ही सभव होता है। फिर भी कुछ सुधारकी उम्मीद की जा सकती है।

६ चित्र २० से प्रकट होता है कि आदमी मजबूत है। खुराक इसे बढ़िया मिलती रही है। फिर भी उसका आकार प्रकार सोलह आने सही नही है। उसका सिर कुछ आगेको झुका हुआ है। बिना किसी कठिनाइके देखा जा सकता है कि उसके बदनमें फुलावट है और उसने अतिरिक्त पोषण पाया है। चमचमाहटके साथ चेहरेपर उत्तेजनाके चिह्न है। माथेपर चर्बीकी गद्दी है।

यह उदाहरण पृष्ठ-सचयका है। गौरसे देखनेपर मालूम होता है कि गरदनका निचला हिस्सा दोपसे बिल्कुल भरा हुआ है। इसके कारण गरदनको पीछेकी ओर झुकाना असभव है। गरदन घुमानेकी कोशिश करनेपर उसे सारे शरीरको ही घुमाना पड़ता है। पार्श्व-सचय दोनो ओर है। गरदन इधर-उधर देखनेमें दोनों ओर शाथ लगती है। इसमें सामनेका सचय नही है। यह रोगी अत्यन्त नाडी-दौर्बल्यग्रस्त होना चाहिए। यह अधिक समय तक

किसी मानसिक काममे नही लगा रह सकता । शारीरिक श्रममे भी देर तक लगे रहना इसके लिए सभव नही है। पूरा ध्यान देकर वह किसी व्याख्यानको सुन-समझ नही सकता, किसी सिनेमा और थियेटरमें भी बहुत देरतक बैठे रहना उसके लिए सभव नही है। मतलब, वह किसी भी कमरे या हालमें बहुत देर तक बठा नही रह सकता। उसका दिमाग खराब हो जानका बहुत अदेशा है।

उसे खूनी मस्स भी होगे, जिनके माफत दोष पीठकी ओर जाता है।

मेरी विधिसे इलाज करनेपर कइ सालोमें इसके पूण नीरोग होनेकी आशा की जा सकती है। दोपमे—द्रव्यम अभी सख्ती नही आइ है, इसलिए कुछ सुधार तो शीघ्र हो सकता ह। मस्तिष्कसे दोष जितनी जल्दी निकल जायगा उतनी ही जल्दी उसे लाभ होने लग सकता है। पूण नीरोगिताके लिए तो पृष्ठ और पाश्व-का सारा सचय जाना चाहिए।

७ चित्र २ का व्यक्ति मोटा-सोटा है। वह कदम धीरे-धीरे वढाता है। उसका आकार-प्रकार—वहिआकृति खराब न होनेपर भी त्वचाका वण वतलाता है कि रोग अदर तक पैठ गया ह। वहुत सुख होनेके कारण त्वचा चमकीली लगती ह। उसका प्रत्यक्ष मोटापा बतलाता कि रोगीमें भारी सचय ह। मेदसे माथा गद्दीदार हो गया है। मेद आखोपर इस प्रकार छा गया है कि वे छोटी दिखाइ देती ह और उनके खोलनेम कठिनाइ होती ह। हमे तुरत पता चल जाता ह कि यहा पष्ठ-सचय है। दवाव माथेसे नीचेकी ओर ह यानी पीछे। मोटे, लटकते हुए गाल, वतला रहे हैं कि सिर दोपसे भर गया है। उसकी शून्य-वन्द
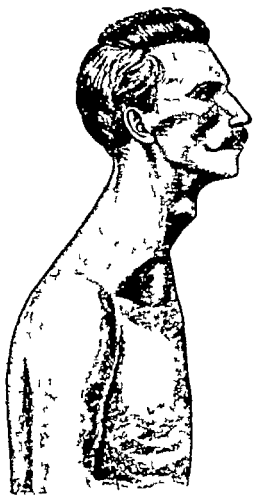
शरीर क्षीण सिर आगे झुका हुआ, सिर—सामान्य मस्तक—सामान्य आँखें—मंद, नाक—आकृति सामान्य, भीतर नाक, मुँह—खुला चेहरा—अधिक दुबला, खाकी रंग, सीमा रेखा सामान्य । गर्दन—बहुत लम्बी, सख्त, पिंडोंवाली गुद्दीकी सीमा रेखा सामान्य छाती—खोखली।

चित्र ४२—अम्ल और पार्श्व-सचय
(क्षयोन्मुख)
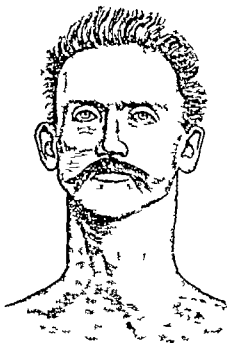
चित्र ४३—अग्र और पार्श्व-सचय

चित्र ४२ वाली आकृतिका सामनेका चित्र।
चेहरकी चौरसाई और असामान्य लम्बी
गर्दन द्रष्टव्य है।
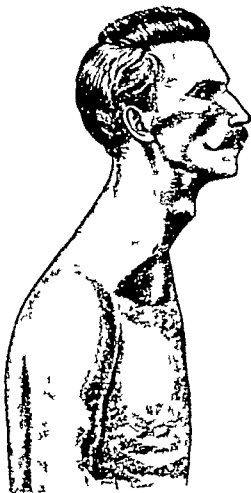
शरीर क्षीण, सिर आगे झुका हुआ सिर—सामान्य, मस्तक—सामान्य आँखें—मन्द नाक—आकृति सामान्य, भीतर नाप, मुह—खुला, चेहरा—अधिक दुबला सावले रग सीमा रेखा सामान्य । गर्दन—बहुत लंबी सख्त, पिंडलियोंकी गुद्दीकी सीमा रेखा सामान्य, छाती—पसली।

चित्र ४२—अग्र और पार्श्व-सचय (क्षयारोग)
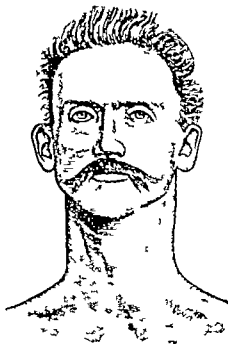
चित्र ४३—अग्र और पार्श्व-सञ्चय

चित्र ४२ वाली आकृतिका सामनेका चित्र।
चेहरकी चौरसाई और असामान्य लम्बी
गर्दन द्रष्टव्य है।

चाहिए, पर उसके पूर्ण आरोग्यका भरोसा तो थोडा ही है। हा, उसकी दशामें सुधारकी आशा जरूर की जा सकती है।

दुर्भाग्यवश रोगीकी दशा इससे पहले नहीं जानी गई। साल दो साल पहले तो उसके अच्छे होनेकी पूर्ण आशा की जा सकती थी।

९ ५१ और ५२ चित्रमें प्रदर्शित बालक। इसके सामने आते ही तुरत कहा जा सकता है कि उसका सिर अस्वाभाविक रूपसे बडा है और आगेकी ओर झुका हुआ है और चेहरा मुख है। गर्दन अनुपातत बहुत कोताह (तग) है। पूरी परीक्षा बतलाती है कि उसके शरीरभरमें सचय है, जो चारो ओरसे आखोकी ओर अग्रसर हुआ है। चित्रके अनुसार पेड भी बहुत बडा है। बहुतेरे लोग तो इस बच्चेको खूब विकसित मानेंगे, लेकिन हमारी दृष्टिमें तो वह हर तरहसे रोगी है। आखोपरका असर तो आसानीसे देखा जा सकता है। वास्तवमें मेरे पास लानेके समय तक लडका करीब-करीब अधा हो गया था। चित्रमें तो वह एक महीने इलाजके बाद दिखाया गया है। उसके पेडूका हिस्सा आरभमें बहुत आगे निकला हुआ था और आखोकी ओर दबाव पूरी तरह प्रकट था।

४

सचयका निवारण

सचयको हटाना—शरीरमेमे दोपको निकालना, रोगकी चिकित्साका यही एकमात्र सच्चा, उपयुक्त उपचार है। दोपको शरीरके इस हिस्सेसे उस हिस्सेम केवल टेल देना या इसे जमा रहने देकर सूखने देना, यह कोइ चिकित्सा न होकर सिर्फ लक्षणोका दवा देना है।

सारे-के-सारे एलोपथ डाक्टर तो यही करते हैं। दूसरी पद्धतिवाले ता कमोवेश—वहुत बार अनजाने ही—वास्तवमें रोगके कारण दूर करनेकी कोशिश करते हैं। उनकी भी सफलताम निश्चितता तो नही ही होती है।

विना दवा और चीर-फाडके, रोगोको आराम करनेका अत्यन्त प्रभावशाली तरीका मैंने अपनी 'नवीन चिकित्सा' पुस्तक में वतलाया है। पाठक उसे देख सकते हैं।

यहा मैं कहना चाहता हू कि रोगीके आराम होनेका वडा सबूत शरीरसे दोप सचय दूर होना ह। दोप दूर न हुआ तो वह आराम कैसे माना जा सकेगा ? या कह कि वह आराम तो तभी कहलायेगा या होगा जवकि शरीरसे दोप दूर हो जाय। दोना एक ही चीज है। अवश्य, आरोग्यकी अनुभूति तो दोपके पूरी तरहसे निकल जानेके पहले ही होने लगेगी। यह तो होती तभी है जब दोप कम होने लगता है। मुखाकृति विज्ञानकी मददसे हम निश्चय कर सकते ह कि पूण आरोग्य प्राप्त हुआ है अथवा केवल आशिक सुधार हुआ है।

चित्र ४४ और ४५ म की स्त्री सामनेके और पाश्वके सचपन ग्रस्त है। उसने अपनी गदनके ट्यूमर—गाठ—के लिए दस बरस तक हर तरहके इलाज कराये, पर कोई लाभ न हुआ। अन्त म उसने मेरा उपचार आजमानेका फैसला किया और ढाई वर्ष इलाजके बाद उसने रोगसे छुटकारा पाया। चित्र ४६ रोगी के आराम हो जानेके बादका ह। केवल वह गाठ ही नही गई रोगके दूसरे सारे लक्षण भी जाते रहे। चेहरेकी गमगीनी दूर हो गई, गाल भर गये, मुह बद रहने लगा जिसे रोगिणी पहले हमेशा खुला रखती थी। गदन स्वाभाविक गोल और चिकनी हो गई। त्वचाका वण जो पहले मुरझाया हुआ था अब ताजा गुलाबी हो गया। जबतक उसने पूण आरोग्य नही प्राप्त कर लिया, उसका पाचन बराबर बिगडा रहा। अब सब ठीक हो गया, कोई खराबी बाकी न रही। फलस्वरूप जीवन आनन्दप्रद हो गया। उसके चेहरेपर खासी सुन्दरता आ गई।

इस प्रकार केवल ये ही लक्षण नही ठीक हुए, जिनके लिए उपचार किया गया था, शरीरकी गदगीके दूसरे लक्षण भी मिट गये। शरीरमे सारी गदगी—दोप—खारिज हुए बिना यह सभव नही था।

चित्र ४७-४८ में भी एक रोगीमें अद्भुत परिवतन हुआ दिखाई दता है। उक्त रोगीने मेरी उपचार विधिको अपनाया था। उसका एक पत्र मैं नीचे छाप रहा हू।

चित्र ४७ में पाठक देखेंगे कि रोगी समूचे शरीरके दोप-सचयसे पीडित ह। उसे स्नायु-दौबल्य सता रहा था। उसे भय लगता था कि किसी दिन भी यह किसी उग्र रोगका शिकार हो सकता है।

चित्र ४४

देखें—चित्र ४५

चित्र ४५—अग्र और पार्श्व-सचय
(वही व्यक्ति, जो ४४ में ह)

सिर—सामान्य, मस्तक—सामान्य, आखें—सामान्य, नाक—सामान्य, मुह—खुला चेहरा—अधिक दुबला, सीमा रेखा मिट गई है, गदन—बडे-बडे पिंडोंसे भरी, गुद्दीकी सीमा रेखा सामान्य।

चित्र ४६—सामान्य आकृति
४४ और ४५ वाली स्त्री, २॥ सालके उपचारके उपरात।

चित्र ४८ मे दोप-सचय घटा हुआ दिखाइ देता है। इस चित्रम वह अपेक्षाकृत दुवला लगता है, लेकिन समय पाकर उतनी उम्रके वावजूद उसका शरीर भर जायगा और उसपर आवश्यक माम आ जायगा—रुग्ण मासके वदले नीरोग मास आयेगा।

यहा मुझे यह कह देना चाहिए कि रोगीने अपने पत्रमे जिस चिकित्साकी चर्चा की, वह मुझमे पूछकर नही, वल्कि मेरी 'नवीन चिकित्सा' पुस्तकमे पढकर की थी। इतनी अधिक उम्रम जो उपचार किया गया, वह मेरी दृष्टिसे वहुत सख्त माना जायगा, लेकिन शरीरने सफलतापूवक उसका मुकावला किया, यह खुशीकी वात है। उक्त सज्जन लिखते ह

प्रिय कूनेसाहव,

म वहुत दिनोसे लिखनेकी सोचते सोचते आज आपको लिख पा रहा हू। लेकिन कलम आगे वढानेके पहले दो वाते लिख देना चाहता हू, जिनके बिना शायद आपको मेरा स्मरण न आयेगा।

१ म लगभग सन् १८९० की फरवरी म आपसे मिला था।

२ उस समय मेरे पूरी दाढी थी, जिससे आजकी अपेक्षा मेरी शक्ल कुछ दूसरी ही लगती थी।

म इस पत्रके साथ आपको अपने दो चित्र भेज रहा हू। ये ज्यो-के-त्यो रहने दिये गए ह। इनमे किसी प्रकारका परिवतन फोटोग्राफर द्वारा नही किया गया है। पहला फोटो १८८९ के सितम्बर महीनेमें लिया गया था। म ठीक उसी समय डा० के० के एलोपथिक सैनिटोरियमसे चार महीनेके इलाज-के वाद नीरोग वतलाकर मुक्त किया गया था, लेकिन इस फोटोको देखकर मुझे नीरोग कहनेवाला तो कोइ पागल ही हो सकता ह।

दूसरा फोटो ठीक साढे तीन साल बाद लिया गया है, आपकी पद्धतिके अनुसार खुराक और उपचार रखनेके बाद। यदि किसीने आपके उपचारोंका और आपके खुराकके नियमोंका पूर्ण पालन किया है तो मैं कह सकता हूं कि वह मैंने किया है और उसके परिणामसे मुझे पूरा सतोष है। चित्रमें जो महान अंतर दिखाई देता है, उसपर कोई कठिनाईसे ही विश्वास कर पायगा।

इन चित्रोंका आप चाहे जहा, चाहे जैसे उपयोग कर सकते हैं। मैं आपको इसका पूर्ण अधिकार देता हूं। मैं आज भी नित्य ३ घर्षण मेहन स्नान, हर बार २० ४० मिनट का, लेता हू। पहला सवेरे ६ बजे। सुबह आठसे दस तक मैं घूमने निकलता हू यथासभव नगे पैर, सिर्फ कमीज और घुटन्ना पहनकर। कभी जगलमें जाकर कसरत भी करता हू। ९ या १० से ११ तक खुली खिडकीके सामने बैठकर पढाता हू या खुले बैठकर ड्राइंग करता हू। दोपहरको ११ से १२ के बीच घर्षण मेहनस्नान। १२ से १ भोजन, १ से २ बागमें विश्राम, २ से ४ फिर शिक्षण या बैठकर ड्राइंग। ५ या ६ से ७ तक फिर घूमना। ७ बजे घर्षण मेहन स्नान। रातको ९ बजे सोना। मगल और बुधवारको रातको ७॥से ९॥ तक मुझे ड्राइंग सिखानी पडती है। इन दो दिनों मैं आध-आध घंटेका मेहनस्नान लेता हू कक्षा लेनेके पहले और पीछे भी। जनवरी १८९० से १ अगस्त १८९२ तक २ खुराक रोजाना। सुबहका भोजन। चोकरसहित आटेकी रोटी अमृताम्न और फल, विशेषत सेब और अगूर, शामको भाजी, तरकारियां, दलिया और फल, सुबहकी भाति ही। १ अगस्त १८९२ से खुराक तो तीन ही बार लेता हू, लेकिन सारी खुराक बिना पकी होती है, सिर्फ आटेकी छोडकर, जो कुछ पकाने

जाते ह और उनमें थोडा नीबूका रस डाला जाता है, सलादकी शक्लमें। रोटीके बजाय अमृतान्न लेता हू। १ जनवरी १८९३ से १ अगस्त १८९३ तक रोजाना दो ही खुराक ली। सुवह कुछ नही लिया, क्योकि काम कम किया। दोपहरकी खुराक म कच्ची तरकारिया नीबूका रस देकर, अमतान्न या दातोके पूरा काम न दे पानेके कारण, चोकडसहित आटेकी रोटी और फल, शामका अमृतान और फल। १ अगस्त १८९३ से अवतक म नित्य दो ही खुराक लेता हू। सुबह अमृतान्न और फल या चोकड-सहित आटेकी रोटी और फल, वही दोपहरको, कच्ची तरकारिया अमतान और फल। शामको कुछ नही।

इन सवका परिणाम तो चित्रोसे देखा जा सकता है, मेरे कहनेकी जरूरत नही रह जाती। सिफ इतना कह दू कि सिर मेरा काफी गजा था और अब फिर वहा बाल जम आये ह और बालोसे सारा सिर भर गया है। इन साढे तीन सालोम मेरा शरीर इतना वदल गया है कि मुझे पाच बार नइ पोशाके बनवानी पडी, टोपसे लेकर जूते तक और सबसे आश्चयजनक लगनेवाली बात तो है इस ५५ सालकी उम्रमे मेरे एक नइ जाडका निकलना। यद्यपि यह ज्यादा दिन रही नही, तथापि बिना किसी तकलीफके यह आ गइ। लगभग एक साल बाद किसी प्रकार यह बढी। आपके उपचार और खुराकके बिना यह कभी सभव नही था।

यहा छुट्टियोमे मै धूप प्रकाश और वायुका सेवन करता हू, जब खुला दिन होता है तब, और इससे मुझे बहुत लाभ होता है। म आपकी उपचार-विधिके लिए धन्यवाद देता हू।

आपका,

यन

५

जीवनी-शक्तिकी वृद्धि

स्वास्थ्यको बनाये रखनेके लिए—आवश्यक शक्तिकी प्राप्तिके लिए—हमारे उद्देश्यकी प्राप्तिमें सहायक हर छोटी छोटी बातपर हमारा ध्यान देना अत्यावश्यक है। उपचारके उस हर तरीकेको, जो शरीरके दोष-संचयको निकालनेका उद्देश्य रखता है, कुछ-न कुछ जीवनी शक्तिकी आवश्यकता होती है और मेरी नवीन चिकित्सा भी इस नियमसे बाहर नहीं है। शरीरमें यदि गाठा-पिंडाका पाया जाना, इस बातका चिह्न है कि जीवनी शक्ति भयंकर रूपसे घट गई है अन्यथा तो दोष इस प्रकार एक जगह जमा—बड़ा न हुआ होता। रोग-मुक्तिके लिए आवश्यक है कि हम हर ऐसे तरीकेसे काम लें, जो कमजोर हुई जीवनी शक्तिको बढ़ाये और साथ ही हर ऐसी चीजसे बचें कि जो जीवनी-शक्ति का ह्रास करनेवाली हो।

यहा मैं जीवनी शक्तिकी प्रकृतिके विवेचनमें नहीं उतरना चाहता। सिर्फ इस समय तो हमारे सामने यही सवाल है कि हम उसे कैसे बनाये रखें या फिर से प्राप्त करें।

हम रोज खाई जानेवाली खुराककी सहायतासे नित्य नई जीवनी शक्ति पैदा करते हैं। इसमें हम उस हवाको भी जरूर शामिल करना चाहिए, जिसके द्वारा हम सांस लेते हैं।

इस प्रकार खुराक जीवनी-शक्तिको कायम रखनेमें सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। इसलिए यह जरूरी हो जाता है कि हम उस प्रत्येक कारणपर ध्यान दें, जिसका इस चीजपर असर

पडता है।

इसके लिए मैं चार प्रश्न सामने रखकर पाचणके सवालको हल करनेकी कोशिश करूगा।

१ हमारी खुराक किस प्रकार हजम होती है ?
२ हम क्या खायें ?
३ हम कहा खाये ?
४ हम कब खाये ?

हमारी खुराक किस प्रकार हजम होती है ?

शरीर खुराकमेस अपनको बनाने और अपनी क्रियाओको जारी रखनेके लिए आवश्यक तत्त्व––सार––ग्रहण करता है। सार खुराकसे निकलकर पाचनद्वारा शरीरमे लगता है। पाचनके भिन्न-भिन्न रूपापर यहा वहस करनेकी जरूरत नही है, हम सारी क्रियाको एक ही मानकर चलते हैं। आताम पचानेके लिए सामान रहनपर यह क्रिया चलती ही रहती ह। खुराकको मुहमे डालकर चबाना शुरू करते ही यह क्रिया आरभ हो जाती है। खुराकके कुछ भागके लिए तो बचे हुए सामानके पाखानेकी शक्लमें निकल जानेपर, यह क्रिया खतम हो जाती है। पर वहा बचा हुआ और भाग फिर शिराओ, फेफडा और यकृत आदिके द्वारा शरीरमे लगता है––हजम होता ह, और अतमें जो बच रहता है वह त्वचा और मूत्राशय द्वारा निकाला जाता है। शरीरको अपनी क्रियाए आप सम्पन्न करनी चाहिए, इसके लिए किसी भागको बाहरी मदद पहुचाना गलत है। शरीरकी क्रिया अपने-आपमें पूर्ण है, इसमे किसी प्रकारकी अस्तव्यस्तता समची क्रियाम अनियमितताका पता देती है। अस्त-व्यस्त पाचन, दूसरे किसी प्रकारकी भी विशृखलताकी भाति ही सारे शरीरकी गाल

मालका सबूत है।

इस प्रकार पाचन-क्रिया द्वारा शरीर स्वास्थ्यके लिए आवश्यक सब पदार्थ ग्रहण कर लेता है। एक प्रकारसे यह प्रक्रिया सार-ग्रहण-प्रक्रिया है, जिसके द्वारा सत्त्व प्राप्त किया जाता है। फिर भी, पाचन क्रियाकी उपमा देने लायक और कोई प्रक्रिया नहीं है। सारी उपमाएं कमोबेश अपूर्ण हैं पाचन प्रक्रिया अत्यन्त सूक्ष्म प्रक्रियाओंमेंसे एक है। पाचन-यन्त्रके किसी भागको उसके कार्यसे मुक्त करनेकी कोशिश करना गलत है। हम ऐसा करके सिर्फ उन्हें कमजोर कर दे सकते हैं। मानव-बुद्धि कभी इस प्रयत्नमें सफल नहीं हुई, न होनेवाली है।

यदि पाचन कमजोर हो गया है तो हमारा मुख्य काम उसे फिरसे सुधारना है। इसके लिए हमें शरीरमें उससे ज्यादा खुराक नहीं पहुंचानी चाहिए, जितनेपर वह आरामसे अपना काम कर सके। यदि हम स्वाभाविक रीतिसे पाचनको सुधार दें तो समय पाकर शरीरमें अपने आप शक्ति आ जायगी और साथ-ही-साथ जीवनी-शक्ति भी बढ़ जायगी।

हम क्या खायें?

मैंने अपनी 'नवीन चिकित्सा' पुस्तकमें इस विषयकी कुछ विस्तारसे चर्चा की है, पर खास बातोंपर यहां कुछ कहूंगा।

खुराक प्रकृतिके अनुकूल होनी चाहिए। अप्राकृतिक खुराकसे हमें बचना चाहिए। इसीलिए मैं निरामिष भोजनकी सिफारिश करता हूं। आमिष—मांस अप्राकृतिक खुराक है।

खुराकको चबानेके लिए मनुष्यको दांत मिले हैं, इससे सिद्ध होता है कि हमारी खुराकमें मुख्य भाग ठोस (Solid) भोजनका होना चाहिए। अपनेवालोंको ठोस खुराकका प्रयोग करके देखना

चाहिए। प्राय मन्दाग्निवाले तरल खुराकको ठीक हजम नही कर सकते और गलतीसे वे समझते यह है कि सूप, दूध, काफी, चाय, कोको, शराब वगैरा उनके लिए फायदेमद है। मने बहुतेरे मन्दाग्निवालोपर ठोस भोजनके सफलतापूवक प्रयोग किये है।

पका हुआ भोजन हमेशा कच्चे भोजनकी अपेक्षा देरसे पचता है। विकासकी अवस्थाको प्राप्त फल, तरकारी तथा अन्न आदिके पचनेमें बहुत आसानी होती है, पर वे ही वस्तुए पूर्णावस्थामे— परिणतिको पहुच जानेपर, या क्षयकी ओर जानेपर पचनेमे बहुत कठिन होती है। अधपके (गद्दर) फल और नइ पत्तियोकी खुराक-को मन्दाग्निवाले आसानीसे और शीघ्र पचा सकते है। इस प्रकारकी खुराक अधिक मानामे नही खाइ जा मकती। शरीर बतला देता है कि कब बस करना चाहिए।

पहले पहल तो बिना पके फलोकी खुराकसे अतिसार होनेकी सभावना रहती है, क्योकि यह स्वय जल्दी पचनेके साथ-साथ दूसरे माद्देको भी बाहर निकाल देती है। यह आतोमे शीघ्र आगे बढ जायगी। यह पाचनको सुधारनेमें भी सहायक होगी। बहुत अच्छा फल तो वह समझा जायगा, जो सीधे पेडसे तोडकर खाया जाय, गिरकर तो इसके तत्त्व नष्ट हो जाते ह। वह फल न अधिक कच्चा हो, न अधिक पका हुआ ही। स्थानीय फल बाहरी फलकी अपेक्षा लाभकारी होते ह। बाहरी फल दूरसे आनेमें अपनी सुपाचकता खो देते है।

वास्तवमे तो प्रकृति मनुष्याके लिए उपयुक्त खुराक वही पैदा करती ह, जहा वह रहता ह। इस्कीमो लोगोको, यूरोपसे, उनका स्वास्थ्य सुधारनेको खुराक भेजनेकी कोशिश की गइ। नतीजा यह हुआ कि उस बाहरी खुराकसे शीघ्र ही उनका स्वास्थ्य

पहलेकी अपेक्षा अधिक गिर गया। यदि किसी क्षेत्रमें—धरतीमें मनुष्यके योग्य खुराक नहीं पैदा होती तो उससे यही सिद्ध होता है कि वह हिस्सा आदमीके बसने लायक नहीं है। इस दृष्टिसे उत्तरी ध्रुवप्रदेश—बर्फीले प्रांत मनुष्योंके बसने लायक नहीं हैं। वहां बसनेवाले एस्कीमो कभी वास्तवमें स्वस्थ नहीं होते, न लंबी उम्र पाते हैं।

एस्कीमो लोग देखनेमें तगड़े दिखाई देनेपर भी उनका शरीर दोषसे भरा हुआ होता है। एस्कीमो लोगोंकी जीवनी शक्ति बहुत कम होती है। बहुत शीघ्र ऐसा समय आ सकता है, जबकि इनकी जाति दुनियामें खतम हो जाय।

इसके कारण भी हैं। इन्हें मजबूरन अधिकतर सिर्फ मांसपर जीवन बिताना पड़ता है। यह तो है कि जब उन्हें थोड़े खाने पौधे, जो यहांकी धरतीमें पैदा होते हैं, मिल जाते हैं तो उन्हें वे बड़े शौकसे खाते हैं, लेकिन यह तभी होता है जब वहां बरफ नहीं जमी होती है। इतनेसे उन्हें अप्राकृतिक खुराकसे होनेवाली हानिकी पूर्ति नहीं हो पाती। थोड़ा-बहुत काम चल जाता है। जो एस्कीमो समुद्रके किनारे रहते हैं और अधिकतर मछलियोंपर गुजर करते हैं, उनके शरीरमें दोष कम होते हैं। उबली मछली दूसरे मांसकी अपेक्षा कम हानिकर है, खासतौरसे मोटे किये गये पशुओंके मांसकी अपेक्षा।

समशीतोष्ण प्रदेशके निवासी अधिक भाग्यवान होते हैं, जहांकी बसंत ऋतु हमारी पाचनशक्तिको बढ़ाकर खुशखबर देती है। इससे ताजी तरकारियां, पत्तियां और फल खाकर हमारी जीवनी शक्ति बढ़ती है।

प्राय उपर्युक्त खुराकका मनुष्यके लिए विस्तृत प्रकार

माना जाता है, लेकिन इस समझकी बुनियाद जीवनके नियमोकी अनभिज्ञता है।

म यहा एक चीजका विशेष रूपसे जिक्र करना चाहता हू, जिसकी हमारे शरीरको आवश्यकता है। लोगोको तो यह चीज बिल्कुल व्यथ लगेगी, पर पाचनके लिए यह मददगार है। वह पदाथ बालू ह। प्राकृतिक दशामें प्रत्येक खुराकमे कुछ न कुछ वालू लगी रहती है और धो डालनेपर भी यह बिल्कुल तो नही जाती है। कइ दृष्टियोसे वस्तुआका धो डालना लाभदायक होनेपर भी हमारे शरीरके लिए एक बहुत आवश्यक वस्तुमे वह वचित हा जाता है।

जानवर बडे चावमे वालू खाते ह और न मिलनपर वे बीमार पड जाते हैं। मुर्गी और बतखोका हम बराबर देखते है कि जब उन्हे वालू खानेको नही मिलती तो उनकी बीट सूख जाती ह। शुतुरमुग मरुभूमिमे रहते ह और जहा वे पाले जाते ह, वहा अगर काफी बालू न हो तो उनके पखोकी सुन्दरता जाती रहती है। चाहे जितना अच्छा खाना देनेकी दशा मे भी बालू न मिलनेपर उनके पख सुन्दर नही रहते ह।

आदमियोके लिए भी कुछ वालूकी जरूरत ह। इसलिए पूरा गेहू या बिना छना हाथ चक्कीका आटा खाना, या उससे बनी रोटी खाना, मदा अथवा उससे बनी रोटीकी अपेक्षा कही अच्छा है, क्योकि गेहूमें कुछ-न-कुछ वालू चिपका रह ही जाता है। पशुओको अच्छी तरह देखनेके बाद मैंने मनुष्यके मेदेपर थोडी मात्रामे वालूका असर देखनेके लिए कुछ तजरबे किये। परिणाम इतना सतोपजनक हुआ कि वह सुनने लायक है। पहले पहल मने एकदम शुद्ध वालू (समुद्री वालू) का इस्तेमाल किया, वैसे तो

नदीकी बालू भी वही काम दे सकती है। बालू यानी समुद्री बालू, एक तरहका रोगाणुनाशक असर करती है। जो चाहे यह तजरबा करके देख सकता है। यदि किसी कमरेकी हवा गंदी हो गई हो तो लाल तवे पर कुछ मुट्ठी बालू डालकर देखा जा सकता है। कमरेकी दुर्गन्ध दूर हो जायगी। इस प्रयोगके समय खिड़कियां सब बंद करनी चाहिए, जिससे बालूका प्रभाव पूरा-पूरा देखा जा सके। बालू प्रकृतिसे रोगाणुनाशक है। मिट्टी मिली बालूमें असर उतना अधिक नहीं होगा।

यह प्रश्न हो सकता है कि क्या हमारे अन्दर वही असर बालू भीतरके गंदे मैलको और साधारणतया दोषको दूर करके नहीं कर सकती? इसका तो पता नहीं, लेकिन बालू उस दलदल-को तो सुखा देती, जहां भयंकर कीटाणु उत्पन्न होते हैं।

मैंने बालूके प्रभावका पूरा पता लगानेके लिए बहुतेरे तजरबे किये हैं और सबका अच्छा नतीजा आया है। यहां बालूके प्रभावका एक उदाहरण दे रहा हूं।

एक स्त्री युवावस्थामें ही कब्जसे पीड़ित थी। उसने बिना किसी नतीजेके बहुत-सी दवाओंका प्रयोग किया। पचास सालकी उम्रमें उसकी दशा बहुत ही कष्टकर और भयंकर हो गई। उस पर कोई जुलाब काम नहीं करता था और कभी-कभी तो कई हफ्ते—उसके कथनानुसार तो एक बार पांच हफ्ते—उसे दस्त नहीं हुआ। मेरे पास आने पर मैंने उसे दिनमें चार-पांच घर्षण कटि-स्नान बताये और खानेको साग, गेहूं और मीठे फल। यह उपचार कब्जमें बहुत कम ही असफल होता है। पर इसके लिए यह भी नाकाफी रहा। इसलिए मैंने उसको दिनमें तीन-तीन बार भोजनके तुरन्त बाद एक चुटकी बालू खाने दिया। नतीजा बड़ा

शीघ्र हुआ और आशाके बाहर। दूसरे दिन भी दस्त हुए। पहले तो पाखाना काला, कडा और गाठदार हुआ, समयमे हुआ और बिल्कुल सामान्य रूपमे। स्नान और भोजन पहलेके मुताबिक चलता रहा।

इस तरह हमने देखा कि बालूने बहुत अच्छा असर किया और यह पाचनको ठीक रखने और उसको ठीक होनेके लिए सहायता करनेमे निश्चित प्राकृतिक तरीका है। डाक्टर तो जरूर इस बातसे इन्कार करेगा कि बालूसे कोइ असर हो सकता है, क्योकि बालू बिल्कुल घुलनशील नही है और इसका शायद ही कोइ अश पचता है। डाक्टर का तो खुराक और उसके पचनेके तरीकोके सम्बन्धम हिसाब ही दूसरा है। वह तो हिसाब लगाकर कहेगा कि शरीरको अमुक-अमुक चीज अमुक परिमाण-मे चाहिए। शरीर केवल सामान ही नही चाहता, जरूरत शरीरके अगोके काम करनेकी भी होती है। काम करते रहकर ही वे तन्दुरुस्त और सही-सलामत रह सकते ह। पाचन अगोको स्वय खुराकसे रस खीचना चाहिए, जिस रस से वे खून, मास, हड्डिया, मज्जा और बाल वगैरा बना सके और पाचक रस जैसे दूसरे अम्ल रस और मद्यसार बना सके। प्राकृतिक खुराकमे शरीरके लिए आवश्यक सब पदार्थ मौजूद रहते ह। शरीरमे उनमे खीच लेनेकी शक्ति रहनी आवश्यक है। शरीरमे वायु पैदा करनेकी शक्ति भी रहनी चाहिए, जिसमे वह खुराकको गति दे सके और उसे नीचे सरका सके। काफी वायु पैदा न होने-पर अवरोध पैदा हो जायगा और परिणामस्वरूप सिर-दर्द होगा। यह अनियमितता उसी समय होती है, जब शरीरमें पहलेसे दोष सचय रहता है या अप्राकृतिक खुराक इस्तेमाल की जाती है।

मैं बच्चोंकी खुराकके बारेमें भी कुछ कहना चाहूँगा। शिशुकी प्राकृतिक खुराक माका दूध है। जिन बच्चोंको यह नहीं मिलता, उन्हें अभागा ही समझा जायगा। उनके शरीरमें दोष सञ्चय होगा। चित्र ४६ में जो लड़का दिखाया गया है, उसने अपनी माका दूध पीया है। ५० और ५१ में दिखाये गए लड़कोंके चित्रसे मुकाबला कीजिए, जो कृत्रिम खुराकपर रक्खे गए थे। प्रत्येकका सिर अनावश्यक रूपसे बड़ा है और पेड़ू आगे निकला हुआ। ऐसे बच्चे हमेशा अकाल प्रौढ़—बचपनमें अधिक तेज—दिखाई देते हैं। यूरोपके लोगोंमें दोष-सञ्चय बढ़ रहा है, इसका पता इस बातसे चलता है कि वहां बचपनमें विलक्षण बुद्धिवाले, होशियार लड़के ज्यादा दिखाई देने लगे हैं। मां-बाप अपने इन बच्चोंका गौरव करते हैं और लोगोंको दिखाते हैं। लेकिन करनी चाहिए इन बच्चोंपर दया, क्योंकि आगे चलकर इनमें यह बुद्धिकी विलक्षणता गायब हो जाती है। बचपनकी विलक्षणता—चञ्चलता—दोष-सञ्चयका चिह्न है। यह चञ्चलता तभी होती है जबकि दोष मस्तिष्ककी ओर बढ़ता है और उसका असंतुलित विकास होता है। किसी हिस्सेमें इस प्रकार दोष सञ्चय होनेपर उसमें एक खास क्रियाशीलता पैदा हो जाती है। कुछ सामुद्रिक शास्त्रवाले (Phrenologist) भी ऐसे असीम विकासकी बात कहते हैं। लेकिन उन्हें यह पता नहीं है कि यह दोषका सञ्चय है, क्योंकि वे उसके कारणसे अनभिज्ञ होते हैं।

ऐसे लड़के देखे गए हैं, जो सात वर्षकी उम्रमें बीस वर्षकी उम्रवालेसे ढंग दिखाते हैं, लेकिन आगे चलकर ऐसे लड़के अपने दूसरे साथियोंसे बुद्धिमें पीछे रह जाते हैं। बचपनमें अनेक कामोंके लिए प्रशंसा पानेवाले लड़कोंके बारेमें देखा गया है कि बड़ी उम्रमें

शरीर—सामंजस्य रूपसे विकसित, सिर—उम्रके हिसाबसे सामान्य, इसी प्रकार दूसरे सब भाग सामान्य, विशेषत पेड़ूकी सामान्य आकृतिपर ध्यान देना चाहिए। बच्चेको माताका दूध मिला था और वह ९ महीनेमें ही चलने लगा था। चित्र लेनेके समय वह एक सालका था।

चित्र ४९—सामान्य आकृति
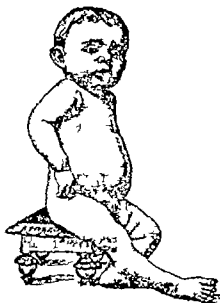
चित्र ५०—व्यापक सचय

शरीर—मोटा और भद्दा, सिर—बहुत बड़ा, मस्तक—चर्बीसे भरा नाक—बहुत मोटी मुंह—खुला गर्दन—अधिक छोटी और मोटी गर्दन पर सीमा रखा लुप्त पेड़ू—आगे निकला हुआ, हाथ और पैर—बहुत फूले हुए। बच्चा डिब्बेके दूधपर पला था और २१ महीनेका हो जानेपर बिना सहारेके मुश्किलसे बैठ पाता था।
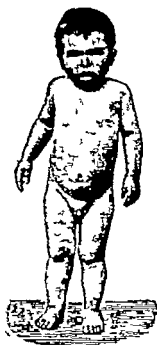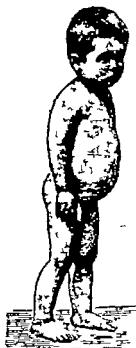
चित्र ५१ चित्र ५२

व्यापक सचय

(तीन वयके लडकका सामनेका और बगलका चित्र)

शरीर—भारी भद्दा सिर—अधिक बडा मस्तक—अत्यधिक चर्बीसे भरा, आँखें—बहुत दबी, लगभग अंध, गर्दन—सीमा रेखा लुप्त फिर मुश्किलसे घुमा सकता है, पेड़ू—लटका हुआ दोषमे भरा हुआ, हाथ और पैर—मोटे, पर मल्ल, लोच रहित। यह बच्चा भी डिब्बेके दूधपर पला था।

उनकी वह गायन-पटुता गायब हो गइ और संगीतकी साधनाके लिए जिस श्रम और बुद्धिकी आवश्यकता होती है, वह उनमें नही रह गइ। चित्र ५३ पोहलर नामक एक लडकेका है। उम्रकी दृष्टिसे वह अधिक विकसित लगता है। डाक्टरोको इसमे कोइ अस्वाभाविकता नही मालूम होती, लेकिन मुखाकृति-विज्ञानकी दृष्टिसे हम कह सकते है कि उसके सिरमें दोप-सचय बडी मात्रामें है और उसका माथा कमानीदार हो गया है। उसकी आखें काचकी तरह चमकीली हैं। हम कह सकते है कि बच्चेकी पाचन शक्ति खराब होगी। निस्सन्देह उसके सामने और पार्श्वके भागमे दोष-सचय है, यद्यपि चित्रसे इस बातका पूरा अन्दाज नही हो पाता। लडकेका सिर ऊपरकी तरफ बहुत चौडा है और उम्रका देखते हुए उसका मस्तिष्क अस्वाभाविक रूपसे विकसित हो गया है।

हम कहा खायें ?

कितनोको ही यह प्रश्न फिजूल मालूम होगा, लेकिन बात ऐसी नही है। जैसाकि पहले कहा गया है, हमारे फेफडोको खुराक पूरी मिलनी चाहिए। अच्छी, शुद्ध हवा जीवनके लिए और जीवनी-शक्तिको बढानेके लिए उतनी ही अनिवार्य है जितना कि भोजन। खाते समय हम अपने-आप लबे सास लेते है और फेफडोका अधिक हवा मिल जाती है और कुछ हवा हम भोजनके साथ पेटमे भी निगल लेते है। इस दृष्टिसे यह विचार अनावश्यक नही है कि वह हवा अच्छी है या खराब। यदि मौसम अनुकूल हो तो कमरेकी अपेक्षा बाहर दालानमे खाना अच्छा है। कमरेमे ही खाना हो तो कमरा हवादार और प्रकाशयुक्त होना चाहिए, उस समय सब खिडकिया खुली होनी चाहिए। यह उन बीमारोके लिए

चित्र ५३—पाइव और अप-सचय

शरीर—सामान्य, सिर—ऊपरसे अधिक चौड़ा, मस्तक—आगे निकला हुआ, आँखें—चमकीली नाक—सामान्य, मुख—सामान्य।

और भी आवश्यक है, जिनकी घटी हुइ जीवनी-शक्तिको बढाना हो।

हम कब खायें ?

इसपर ज़रा विस्तृत विचार करनेकी आवश्यकता ह। यो तो यही कहा जायगा कि जब भूख लगे तब खाय लेकिन यह ता हमारे वशकी बात है कि हम अपनी भूखका वक्त बदल ल। बहुत लोग ऐसा अप्राकृतिक जीवन बिताते ह कि भूग उन्ह गलत समयोपर लगती है, लेकिन यह वास्तविक भूख नही हाती। पशुआको देखनेसे हमें मालूम होता है कि उनमे प्राय सभीको सुवह पूरी भूख लगती है और उस समय वे अपनी पूरी खुराक लते ह। इसका एक दृढ कारण भी ह, जो सूयसे सम्बन्ध रखता ह। दिनके दो हिस्से होते हैं—प्रेरक और स्तब्धक (Animating and Tranquillising)—चढाव और उतारक (पूर्वाह्न और अपराह्न)। चढावका समय सूयके चढनेके साथ शुरू होता ह, जबकि सारी सष्टिको क्रियाशील होनेके लिए वह जाग्रत कर देता है। प्रत्येक बागवान और देहाती पौधोपर सयकी प्रात-कालीन किरणाके प्रभावसे परिचित होता है। जिन वृक्षोको प्रात कालीन धूप नही मिलती, उनमे फल नही आते या वहुत कम आते ह। यदि सूयकी प्रात कालीन किरण पेडके किसी खास हिस्सेपर पडती है तो हम देखते ह कि उस हिस्सेमें विशेष फल आते ह।

मनुष्यपर भी वृक्षोंकी भाति ही सूयका प्रभाव पडता है। कोइ मनुष्य यदि प्रकृतिके नियमानुसार प्रात काल शीघ्र उठे और खुली हवामें घूमे तो वह मन और शरीरपर सूयकी पडनेवाली किरणोका प्रभाव तत्काल अनुभव कर सकेगा। दोपहरको सूय

जब ढलने लगता है तो दिनका दूसरा हिस्सा शुरू होता है और इस हिस्सेमें आदमीकी स्फूर्ति और शक्ति कम होने लगती है। सूर्य अस्त होनेपर यानी सायंकाल, सबको विश्राम या निद्राकी विशेष इच्छा होती है। इसके विपरीत पूर्वाह्नमें शरीरमें विशेष स्फूर्तिका अनुभव होता है तथा शरीरके सब काम तेजीसे चलते हैं। शरीरकी पाचन-शक्ति भी प्रातःकाल जोरदार होती है। तीसरे पहर वह जोर बहुत कम हो जाता है और शामको तो और भी कम। इससे यह सिद्ध होता है कि हमको अपनी खुराकका अधिक हिस्सा दिनके पहले भागमें खा लेना चाहिए और दोपहरके बादके लिए बहुत थोड़ा हिस्सा खानेको बाकी रखना चाहिए। खासकर बीमार और कमजोरोंको इस नियमका पालन करनेका ख्याल रखना चाहिए।

प्रश्न होगा कि बीमारोंको तो सुबह भूख लगती ही नहीं, और बिना भूखके वे कैसे खायेंगे? प्रातःकाल भूखका अभाव इस बातका निश्चित चिह्न है कि पाचन-यंत्र बहुत ही कम जोर हो गये हैं या गलत समयपर काम करनेको मजबूर किये गए हैं। इस नये युगमें रोशनीके साधनोंने रातको दिनकी तरह काम करना संभव कर दिया है। बहुत करके यह आश्चर्यजनक उन्नति हमारे लिए घातक सिद्ध हुई है। इस नये युगमें सभ्यताकी चकाचौंधमें पड़े हुए नगर निवासियोंमें बहुतोंको जो नाड़ी-दौर्बल्यका रोग लगा हुआ है, उसका एक मुख्य कारण यह रातको दिन बनाना ही है। दिनमें तो हम काम करते ही हैं, रातको भी तेज रोशनीकी सुविधा हो जानेके कारण शरीर और मनको जितना आराम देना चाहिए नहीं देते और इसके कारण, खास तौरसे, पुष्ठ-संचय घटता है।

लोग शामको भोजन बहुत देरसे करते है। बहुतेरे तो उस वक्त करते है जबकि उन्हें होना चाहिए बिस्तरापर। इस प्रकार खाया हुआ भोजन पूरी तरह कभी पच नही सकता और पाचन-यन्त्रोपर वह इतना बोझ डाल देता है कि ये बेचारे सवेरे तक हल्के नही हो पाते है। इसीलिए सवेरे भूख नही लगती। इसके सिवा, पेट भरा होनेके कारण रातको शरीरको वास्तविक आराम भी नही मिलता। अनपचा भोजन शरीरको काममे जोते रहता है और नतीजा यह होता है कि सवेरे स्फूर्तिके बजाय सुस्ती लगती है।

अपनी इन आदतोको दुरुस्त करनेमे थोडी-सी दृढ इच्छाकी जरूरत है। बीमारोको चाहिए कि यदि वे आराम होना चाहते हो तो वे इस प्रकार ठीक समयसे भोजन करके अपने स्वास्थ्यकी रक्षा करें।

एक दिन रातको, बिना खाये सो जाइये या बहुत ही कम खाकर सोइये और देखिये, दूसरे दिन सुबह जरूर भूख लगेगी। निस्सन्देह ऐसा करनेके लिए अपने सारे ढगोमें परिवतन करनेकी जरूरत होगी। बहुतेराको तो जल्दी बिस्तरापर नीद लेनेमे कठिनाइ होगी, पर, वास्तवमे तो, यह एक आदतकी बात है। तब सुबह उठनेमे कोइ थकान नही रहेगी और शामको भी जल्दी सोनेकी इच्छा हुआ करेगी और शरीर शीघ्र ही इनकी माग करने लगेगा, इतना शीघ्र कि जिसकी हम उम्मीद भी नही कर सकते।

हमको अपना सारा जरूरी काम पूर्वाह्नमे निबटा लेना चाहिए, मनुष्य-जातिके लिए सबसे आवश्यक काम—गर्भाधानका भी यही उपयुक्त समय होता है। इस समय गर्भ धारणकी अधिक सभावना रहेगी और उसमे सतान भी अच्छी होगी। जब हम समझते है कि अच्छी और स्वस्थ सतान पैदा

करना मनुष्य-जातिके लिए बहुत आवश्यक है तब हमको चाहिए कि उसके लिए अच्छी-से-अच्छी स्थितिका उपयोग करे। प्राय देखा गया है कि जिन मनुष्योने अपनेको नपुसक मान लिया था, इस कारण कि अपराह्णमें उनके शरीरमें गर्भाधानकी शक्ति नही रही थी, उन्होने देखा कि पूर्वाह्णमे सामान्यत उनमें वह ताकत रही है।

इन दोनो, पूर्वाह्ण और अपराह्णका वास्तविक अतर यहा स्पष्ट दिखाई देता है। लेकिन मनुष्योको यो भी म रातके सगममे बचनेकी सलाह दूगा। कारण, उस समयका सगम शरीरको अशक्त बनाता है। दिनकी मेहनतसे शरीरमें थकान, चिंता और मानसिक श्रमके कारण नींद खोकर शरीरका क्षीण करनेवाली क्रिया, जान-बूझकर शरीरको हानि पहुचानेके समान है। आगे रह जानेवाले गर्भपर भी बुरा असर पडता है। या गर्भपर असर तो बहुत बातोका पडता है, जसे, यदि माता या पिता सगमके समय नशेकी हालतमे हुए तो उस दशामें रहे हुए गर्भ से पैदा होनेवाला बच्चा प्राय मदबुद्धि होगा, नपुसक भी हो सकता है।

हमें अपने जीवनको इस प्रकार नियमित करना चाहिए कि हम अपने अधिक आवश्यक कर्त्तव्य पूर्वाह्णमे पूरे करें। मुख्य भोजन उसी कालमे ग्रहण करें। अपराह्णमे कामकी बागडोर ढीली करते जाय और शामके बाद जल्दी सो जाय। तीव्र रोगोका जोर अपराह्णमे ही अधिक होता है। ज्वर प्राय अपराह्णमें बढता है, क्योकि उस समय शरीरकी प्रतिरोध-क्षमता कम हो जाती है।

दिनकी भाति ही सालके भी स्फूर्ति स्थय भेदमे दोप

सवमें माने गए ह । पहला काल[1] कक सक्रान्ति लगभग २१ जून है। इन दिनोमें लोगोमे सजीवता रहती हैं। अनेक देशोमे इस ऋतुमें विशेष त्योहार मनाये जाते ह । जाडेके दिनाम लगभग २२ दिसम्बरसे, कडी सर्दी पडनेपर भी, लोगोमे उल्लास रहता है। वही वसत ऋतुका समय होता ह । प्रकृतिम चारो ओर उसका प्रभाव प्रकट रहता है। पौधोपर तो उसका प्रभाव सवत्र ह कही दखा जा सकता है। विसर्ग-कालकी (शरद ऋतु) काटी हुइ लकडी ज्यादा टिकाऊ रहती है। इसके विपरीत, आदान-कालकी (फरवरीके बाद) लकडी शीघ्र घुन जाती है। विसग-कालमे चारो ओर प्रकृतिमें स्फूर्तिके चिह्न दिखाइ देते ह । पशुओमे उस समय सजीवता और क्रिया शीलता वढ जाती है। यही उनका गभधारण-काल भी होता है। पौधे भी इस समय तेजीसे उगते और वढते हैं। विसग-काल उपज और वृद्धिका समय है। विसग-कालमें फूल भी भाति-भातिकी गध विखेरते ह ।

---

[1] आयुर्वेदमें भी वषके दो काल माने गए ह । कहा गया ह

मासैद्विसख्यर्माघाद्य क्रमात् षड ऋतव स्मता ।
शिशिरोथ वसतश्च ग्रीष्मवर्षाशरद्धिमा ॥

माघसे आरभ करक पौषतक दा-दा महीनेकी छ ऋतुए (शिशिर, वसत ग्रीष्म वर्षा शरद् और हेमत) होती ह ।

शिशिराद्यास्त्रिभिस्तस्तु विद्यादयनमुत्तर
आदान च तदादत्ते नणां प्रतिदिन बलम

इनमें पहली (शिशिरादि) तीन ऋतुओमें सूय उत्तरायण होता ह और वह आदान-काल कहलाता ह । कारण उस समय सूय मनुष्योका बल प्रतिदिन खीचता ह । वादकी वर्षा शरद और हेमन्त इन तीन ऋतुओमें सूय दक्षिणायन होता ह यह विसग-काल कहलाता है। इसमे सूय प्राणि मात्रको बल देता है।

वर्षादयो विसगश्च यवबल विसृजत्ययम ।

कुछ पौधे—जैसे गुलाब वगैरह ग्रीष्म और शरद्में (आदान-कालमें) वैसे सुन्दर फूल नहीं देते। वसत और ग्रीष्मके आरम्भमें—विसग-कालमें एक बार सूयके अपनी पूरी ऊचाइपर पहुचकर ढलने लगनेपर आदान-काल शुरू होता है। पशुओंकी चचलता कम होने लगती है। वनस्पति-जगतमें वृद्धि रुक जाती है। उस समय तो सिफ उन्ही फलोंके पकनेका काम होता है, जो विसग-कालमें लगे, बढे थे। विसग कालकी अपेक्षा आदान-कालमे महामारियोंके फैलनेकी अधिक सभावना रहती है। जैसाकि कहा जा चुका है, अपराह्नमें ज्वर बढता है। कारण, शरीरकी प्रतिरोध-क्षमता उस समय कम हो जाती है। आदान-कालम प्राकृतिक स्थितिमे रहे पशुओंकी क्षुधा कम हो जाती है। जाडा आनेपर वह इतनी घट जाती है कि उस समय उन्हें प्राय जो थोडी-बहुत खुराक मिल जाती है, वही उनके शरीर-पोषणके लिए काफी हो जाती है। आदान-कालमें पाचन शक्ति शन-शनै कम हो जाती है। मनुष्योंको भी उस समय खुराक घटा लेनी चाहिए। अत जाडेमें उपवास करना उपयुक्त है, पर दुर्भाग्यवश हमारा आचरण इसके बिल्कुल विपरीत होता है। जाडेमें खूब तर माल खाये जाते है। डाक्टर-वैद्य भी इस ऋतुमें खूब खानेकी सलाह देते हैं, जिससे कि हम जाडसे लड सकें। इस गलतीका नतीजा तो बुरा होता ही है। प्राकृतिक स्थितिम रहने वाले प्राणियोंको देखकर हमारी आखें खुलनी चाहिए। पशुपालक और वन विभागवाले यह खूब जानते हैं कि जाडेमें पशुओंको यदि तदुरुस्त रखना है तो उन्हें अधिक खुराक नहीं मिलनी चाहिए। उष्णकटिबध प्रदेशोंमें, जहा सूयकी अवस्थाम बहुत कम परिवतन होता है, चन्द्रमाका प्रभाव प्रबल होता है।

वहा विसग-काल आदान-कालसे महीनेमे दो बार बदलता है। नित्यका परिवतन तो वहा भी प्राकृतिक रूपसे वसा ही होता है, जैसा हमारे यहा होता है। उष्ण प्रदेशमे देखा गया है कि शुक्ल-पक्षमें काटी गइ लकडिया अच्छी नही रही, जबकि कृष्णपक्षमे काटी गइ ठीक रही। इसी प्रकार यहा जो बाते वपक सबधमे दखी जाती ह, वे ही उन प्रदेशोमें, महीनेके सबधमे देख सकते ह।

इस स्थितिकी व्याख्या क्या है? मेरे ध्यानमे जो आइ है, वह कहता हू। वह कहातक ठीक-बेठीक है, यह नही कहा जा सकता। विसग और आदान-कालका भी यही कारण होना चाहिए, जो दिन और रात तथा गर्मी और जाडेका होना है। इनका सबध सूय और पृथ्वीकी चालसे है। हममेसे अधिकाश माने बैठे ह कि स्वय सयमे हमें प्रकाश और ताप मिलता है। मेरी रायमें यह धारणा गलत है।

सभवत सूयम दिखाइ देनवाला तेज पृथ्वीकी गतिसे पदा होनेवाले विद्युतका ही परिणाम है। पृथ्वीकी गतिसे पैदा होनेवाले सूयके भीतरके तेजके हमारी ओर आनेपर उसकी किरणोके साथ सूयकी कुछ विद्युत् उत्पादक किरणके भी उसमें शामिल होनेकी कल्पनाकी जा मकती है। घूमती हुइ पृथ्वीके पृष्ठ-भागका इन किरणोसे घषण होनेपर ताप और प्रकाश पैदा होकर उमके चारो ओर फैलता है। यदि प्रकाश और ताप सचमुच सूयसे ही आते होते तो फिर हमे ऊचाइ पर (अधिक उच्चप्रदेशमें) सूयका ताप और प्रकाश कम क्यो लगता है? हवाइ जहाजका अनुभव भी यही कहता ह। ताप और प्रकाशकी किरणे सूयसे ही आती होती तो उनका परिमाण चारो ओर एक-सा होना चाहिए था यानी तापका परिमाण मैदानम तथा पहाडकी चाटीपर समान ही होना चाहिए था। कहा जा सकता है कि उच्चप्रदेशमे हवा ठडी होनेके

कारण तापका पता नही चलता। तो पूछा जा सकता है कि पृथ्वी परके तापसे, यदि पृथ्वीसे सवधित हवा तपती है, तो उच्चप्रदेश की हवापर सूर्यकी किरणो द्वारा पडनेवाले प्रभावसे वह हवा तप्त क्या नही होगी ? यह माननेपर कि ताप और प्रकाश पृथ्वीके भ्रमणके कारण पैदा होते है, यह साफ हो जाता है कि जहा पृथ्वीकी गति और उसके कारण होनेवाला घर्षण अधिक तीव्र होगा, वहा प्रकाश और तापका अधिक होना भी अनिवार्य है। वह स्थान भूमध्यरेखाके निकटका प्रदेश अथवा उष्णकटिबध है। यह तो हम मालूम ही है कि इस प्रदेशमे ताप और प्रकाशकी अधिकता होती है। ध्रुवके निकटस्थ प्रदेशमें पृथ्वीकी गति और उसका सूर्य किरणोसे घर्षण करीब-करीब नही-सा ही होता है। इसलिए वहा अत्यन्त सर्दी और निष्क्रिय स्थिति है। ध्रुवप्रदेशमे यदि पडोसके प्रदेशसे गरम हवा न आवे तो वहा और भी अधिक ठडक होगी। इस आधारको सामने रखकर यह समझा जा सकता है कि पृथ्वीपर उष्ण-कटिबध एक और समशीतोष्ण कटिबध तथा शीत कटिबध दो-दो क्यो है ?

उपर्युक्त वर्णनको समझानेके लिए नीचे दो आकृतिया दी जा रही है।
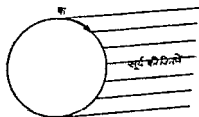
चित्र ५४ चित्र ५५
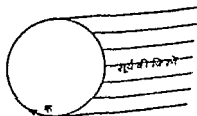
५४ और ५५ आकृतिया पृथ्वीकी ह। इसम तीर पृथ्वीकी गतिकी दिशा वतला रहा है। क' वह स्थान ह, जहासे खडे होकर हम देख रहे है। सूयकी किरणे समानातर रेखामे पथ्वीकी ओर निरतर जा रही ह। पर पृथ्वी एक गतिम नही रहती, वरावर गतिमान रहती है। इस कारण उसके पृष्ठ-भागका क्षण-क्षणपर भिन्न किरणोसे मुकावला होता रहता है। ५४व चित्रमें दशक जब 'क' स्थान पर दिखाइ देता होता ह, तव उसके सामने तुरत सूय उदय होता है। और ५५वी आकृतिमे 'क' पर रहनेवाले मनुष्यको सूय अस्त होता दिखाइ देता है।

इन दोनो आकृतियोसे यह समझ सकते ह कि चुवकीय किरणोके साथका प्रात कालीन घषण अधिक तीक्ष्ण होगा, वजाय तीसरे पहरके, जबकि वे हमारी पीठ पर पडती ह। इसी-लिए हमपर पडनेवाली प्रात कालीन किरणें प्रखर प्रतीत हागी।

हम इस क्रियाको एक छुरीपर धार करनेवाला पत्थर सामने रखकर अच्छी तरह समझ सकते ह। यदि हम तेज किये जानेवाले चाकूके फलको घूमती हुई सान (Grindstone) की विपरीत दिशामें रखते ह तो घूमनेवाले पत्थरका घषण बढ जायगा, पर उस फलको घूमनेवाली दिशामे रखनेसे घषण उतना जोरदार नही होगा। गतिकी दृष्टिसे पृथ्वीकी तुलना एक बहुत बडे डाइनमोसे से की जा सकती है, जिसका चक्कर खानेवाला हिस्सा उन तथाकथित विद्युत् विकिरणके विरुद्ध रगड खाता है, जो कामके लिए विद्युत परिचालन करती ह।

कोइ यह भी कह सकता है कि प्राय तीसरे पहरका ताप प्रात कालकी अपेक्षा तेज होता ह। इसका कारण सिफ यह है कि पैदा हुइ गरमीके कारण वह गर्मी (सुवहवाली गर्मी)

इन गुणोका स्थान मस्तिष्कका अग्रभाग होता है। जिन व्यक्तियोमें सारा सचय सामनेकी ओर होता है, वे बडे चतुर और मिलनसार होते ह। पृष्ठ सचयवाले व्यक्ति लोगोमें ज्यादा मिलना-जुलना नापसद करते ह। न वे ऐसे पेशे ही पसद करते ह, जिनमें उन्हें दूसरोंके साथ अधिक सामाजिक सम्पर्क रखना पडे। यदि विवश होकर उन्हे ऐसे पेशेमे पडना ही पडे तो वे हताश ही होते ह।

मानस-वैज्ञानिक किसी-किसीमे एकतरफी मानसिक सक्रियता देखते हैं, पर वह इसका कारण नही समझ पाते। मुखाकृति-विज्ञान इस सबधमें उन्हें थोडा-बहुत बतला सकता है। मस्तिष्कका असमान विकास किसी प्रकारके दोष-सचयका परिणाम होता है। इससे हम इस परिणामपर पहुचते ह कि यह *मानसिक असतुलन सचयको मिटाकर पुन सतुलित किया जा सकता है।* कभी-कभी असमान मानसिक विकासके कारण मनुष्यको बडी भयकर—जसे, क्रोध, निराशा, आत्महत्या प्रवृत्ति, अनुत्साह आदि—मनोवृत्तिया घेर लेती ह। इनके लिए माना जाता है कि ये तो इस युगकी देन ह और बडे अफसोसके साथ कहा जाता है कि बच्चे भी इसके प्रभावसे नही बचते। लेकिन यह खयाल गलत है, इसका कारण तो लोगोकी सवत्र फली हुइ शारीरिक रुग्णताम छिपा हुआ ह। दुर्भाग्यसे जिन लोगोपर समाजके नियमनका दायित्व है और जिनकी बात लोग मानते है, उन्होने इस विषयपर यथेष्ट ध्यान नही दिया ह।

७

उपसहार

वहुतेरे पाठक इस पुस्तकमें दिये गए स्पष्टीकरणोकी सपूण वैज्ञानिकतामें सदेह कर सकते ह। लेकिन मेरा उद्देश्य तो असली बातोको सबके समझमे आने लायक सीधे-साधे शब्दोमे लिखना-मात्र ह। इसका यह मतलब नही कि यह विषय ही अवैज्ञानिक है।

वास्तवमें विज्ञान उन अनुभवोके सिवा और है भी क्या, जिन्हें मनुष्यने स्पष्ट सिद्धान्तोके आधारपर नियमबद्ध किया है। पर हर मनुष्य स्वय अनुभव करनेको स्वतत्र है, वह किसी खास बिरादरीसे सबधित हो या न हो।

हम यह क्यो देखें कि उसने विज्ञानकी इस या उस शाखाकी शिक्षा पाइ ह या नहीं ? बहुत बार शौकीन और सामान्यजनाने विशेपज्ञाकी अपेक्षा विभिन्न और नये तरीकोसे सत्यकी खोज की ह। दूसरी ओर, पेशेवर लोग तो एक घिसी पिटी लकीरपर चलनेके आदी होते ह। यह ग्रथ मेरे तीस सालके अनुभवोका परिणाम है, जो हजारा लोगोपर सही साबित हो चुके ह। मैं यह कदापि नही कहता कि मने पूणता प्राप्त कर ली है, पर सच्चे अन्त करणसे म यह कह सकता हू कि इस ग्रथमे लिखी गई बाते मेरी कसौटीपर खरी उतरी हैं और मने इनकी काफी जाचके बाद ही इन्हें प्रकट किया है।

●